सत्य सङ्गीत

लेखक—

दरबारीलाल सत्यभक्त

संस्थापक-सत्यसमाज

प्रकाशक—

सत्याश्रम वर्धा [सी. पी.]

नवम्बर १९३८ ई.
मार्गशीर्ष १९९५ वि.

मूल्य दस आने

—: अनुक्रमणिका :—

समर्पण

भगवान सत्य भगवती अहिंसा के चरणोंमें

हे जगत्पिता हे जगदम्बे,

तुमने चरणों में लिया मुझे ।

मैं था अनाथ अतिदीन हीन तुमने सनाथ कर दिया मुझे ॥

तार्किकता में सहृदयता का सम्मिलन किया उद्धार किया ।

निष्प्राण बना था यह जीवन तुमने प्राणों का सार दिया ॥

सब मिला जब कि समभाव मिला सद्बुद्धि मिली संसार मिला ।

सारे धर्मों के पुण्यपुरुष मिल गये जगत का प्यार मिला ॥

मिलगई प्रलोभन जय मुझको विपदा सहने की शक्ति मिली ।

रह गया मुझे क्या मिलने को जब आज तुम्हारी भक्ति मिली ॥

मेरा सर्वस्व तुम्हारा है बोलो फिर तुम्हें चढ़ाऊं क्या ।

अक्षर अक्षर का ज्ञान तुम्हीं ने दिया भक्ति बतलाऊँ क्या ॥

पर भक्ति नहीं मेरे वश में वह गुण-संगीत सुनाती है ।

गंगाजल अँजुली में लेकर गंगा को भेंट चढ़ाती है ॥

तुम्हारा भक्त—

दरबारी.

प्रस्तावना

जब से मैंने सत्यसमाज की स्थापना की तभी से मुझे इस बात का अनुभव हो रहा है कि इस प्रकार के गीत या कविताएँ तैयार की जाँयँ जिनमें सर्व-धर्म-समभाव और सर्व-जाति-समभाव तथा विवेक आदि के भाव भरे हों । पिछले चार वर्षों से मैं ऐसे गीत तैयार कर रहा हूं । सत्यसंगीत उनका संग्रह है । साथ ही इसमें कुछ कविताएँ और आगईं हैं जो कि समय समय पर मेरे हृदय के बाहर निकले हुए उद्गार हैं । ये सब गीत दूसरों के लिये कितने उपयोगी होंगे यह मैं नहीं कह सकता परन्तु इनसे मुझे बहुत शान्ति मिली है और मिलती है । बहुत से मित्र खासकर सत्यसमाजी बन्धु भी इन कविताओं का नित्य उपयोग करते हैं अधिकांश कविताएँ प्रार्थनारूप हैं जिसमें भ. सत्य भ. अहिंसा तथा महात्मा पुरुषों का गुणगान है । ये प्रार्थनाएँ आस्तिकों के लिये भी उपयोगी हैं और नास्तिकों के लिये भी उपयोगी हैं । सत्य और अहिंसा को भगवान भगवती या जगत्पिता और जगदम्बा मानलेने से एक तरह की सनाथता का अनुभव होता है, संकट में धैर्य रहता है और जीवन के सामने एक आदर्श रहता है इसलिये जगत्कर्तृत्ववाद को न मानने पर भी इनकी उपासना हो सकती है और ईश्वर मानने के लाभ मिल सकते हैं । और आस्तिक को तो इन प्रार्थनाओं में आपत्ति ही क्या है ?

यहां सत्य और अहिंसा की सगुणोपासना की गई है । सत्य और अहिंसा एक धार्मिक सिद्धान्त हैं और सब धर्मों के मूल हैं पर इतना कह देने से हमारे दिल की प्यास नहीं बुझती । दिल की

प्यास बुझाने के लिये और सर्व-धर्मोंका मर्म समझने के लिये उन्हें जगत्पिता और जगन्माता के रूप में देखने की ज़रूरत है। तभी हम दुनिया के समस्त तीर्थंकर पैग़म्बर या अवतारों में भ्रातृत्व दिखला सकते हैं। ईश्वरदूत ईश्वरपुत्र आदि शब्दों का मर्म समझ सकते हैं।

हम मनुष्य सत्य और अहिंसा को मनुष्याकार में जितना समझ सकते हैं उतना अन्य किसी आकार मे नहीं। किस भावका शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है यह बात जितनी हम मनुष्य-शरीर में स्पष्ट देख सकते हैं उतनी दूसरे शरीरों या आकृतियों में नहीं। हम अपने माता पिता की कल्पना जैसी मनुष्य शरीर में कर सकते हैं वैसी अन्य शरीर में नहीं। जैसे अमूर्त ज्ञान को मूर्त्त अक्षरों द्वारा समझना पड़ता है उसी प्रकार अमूर्त्त सत्य अहिंसा को मूर्त्त रूपमें समझने की कोशिश की गई है।

राम, कृष्ण, महावीर आदि महात्मा पुरुषों का गुणगान उन्हें ईश्वर मानकर नहीं किया गया है किन्तु व्यापक दृष्टि से जगत की सेवा करनेवाले असाधारण महापुरुष के रूपमें किया गया है। उनके त्याग तप जगत्सेवा आदि पर ही ज़ोर दिया गया है और उनके जीवन के साथ जो अवैज्ञानिक-अविश्वसनीय-घटनाएँ चिपका दीं गईं हैं वे अलग कर दी गईं हैं। जो गुण उनके जीवन से सीखे जा सकते हैं उन्हीं का वर्णन किया गया है। साथ ही समभाव का इतना ध्यान रक्खा गया है कि एक की स्तुति दूसरे की निंदा करने वाली न हो। ऐसी प्रार्थनाएँ आस्तिक और नास्तिक दोनों के लिये हितकारी हैं।

बहुत से लोग प्रार्थनाओं के महत्त्व को ठीक ठीक नहीं समझते। कुछ लोग तो सारी सिद्धियाँ उसी में देखते हैं और कुछ

उसे बिलकुल निरर्थक और ढोंग समझते हैं। ये दोनों ही अतिवाद हैं। प्रार्थनाओं से हमारे हृदय पर ही प्रभाव पड़ता है बस इतना ही लाभ है और यह कम लाभ नहीं है। प्रार्थना से हमारा हृदय शान्त हो जाता है थोड़ी देर को दुनिया के दुःख भूल जाता है सनाथता का अनुभव होता है जिनकी प्रार्थना की जाय उनके जीवन का प्रभाव अपने पर पड़ता है दृढ़ता आती है कर्मठता जाग्रत होती है इसी प्रकार के लाभ मिलते हैं। इसमें अर्थ नहीं मिलता अथवा अर्थप्राप्ति प्रार्थना का लक्ष्य नहीं है पर धर्म काम और मोक्ष तीनों पुरुषार्थ प्रार्थना के लक्ष्य हैं। सदाचार तथा कर्तव्य की शिक्षा धर्म है। गीत का आनन्द काम है दुनिया के दुःख भूल जाना मोक्ष है इस प्रकार यह तीनों पुरुषार्थों के लिये उपयोगी है।

नियमित और सम्मिलित प्रार्थना का उपयोग इससे भी अधिक है। किसी धर्मालय में ऐसी प्रार्थनाएँ की जाँय तो मिलकर प्रार्थना करनेवालों में एक तरह की निकटता आयेगी परिचय बढ़ेगा एक दूसरे की परिस्थिति का ज्ञान होगा इसलिये सहयोग मिल सकेगा किसी एक लक्ष्य से काम करनेवालों का संगठन होगा।

पर प्रार्थनाएँ समभावी होना चाहिये और ऐसी भाषा में होना चाहिये जिसे हम समझ सकें बहुत से लोग आज भी संस्कृत प्राकृत के विद्वान न होने पर भी उसी भाषा में प्रार्थनाएँ पढ़ा करते हैं। यह प्राचीनता की बीमारी है जो कि प्रार्थना को निष्फल बना देती है इसीलिये सत्यसंगीत हिन्दी में लिखा गया है। पाठकों के लिये यह संग्रह कितना उपयोगी होगा कह नहीं सकता पर मेरे लिये तो उसका नित्य उपयोग होता है।

१७-१०-१९३८ —दरबारीलाल सत्यभक्त

॥ जय सत्य ॥

सत्य-संगीत

सत्येश्वर

मेरे जीवनमें रस धार—
बहाकर करदो बेड़ा पार ॥

[१]

मेरे मन-मन्दिरमें आओ ।
आकर करुणा-कण बरसाओ ।
राम रोममें प्रेम बहाओ ।
प्राणेश्वर करदो जीवनमें प्राणोंका संचार ।
मेरे जीवनमें रसधार, बहाकर करदो बेड़ापार ॥

[२]

सत्येश्वर तुम त्रिभुवनगामी ।

सकल-चराचर-अन्तर्यामी ।

सबही धर्मपथोंके स्वामी ।

निराकार हो पर भक्तोंके मन हो अखिलाकार ।

मेरे जीवनमें रसधार, बहाकर करदो बेड़ापार ॥

[३]

मात अहिंसाके सहचर तुम ।

लोकोंके ब्रह्मा हरि हर तुम ।

विश्वरंगके हो नटवर तुम ।

जन्ममरण जीवनमय हो तुम गुणगणलीलागार ।

मेरे जीवनमें रसधार, बहाकर करदो बेड़ा पार ॥

[४]

वेदकुरानाधार तुम्हीं हो ।

सूत्र पिटकके सार तुम्हीं हो ।

ईसाकी मुखधार तुम्हीं हो ।

रोम रोममें कोटि कोटि हैं तीर्थंकर अवतार ।

मेरे जीवनमें रसधार, बहाकर करदो बेड़ापार ॥
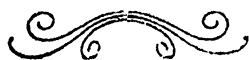
कौन

कौन तू ? तेरा कौन निशान ।
किमाकार, क्या सीमा तेरी, क्या तेरा सामान ॥
कौन तू तेरा कौन निशान ।

अगम अगोचर महिमा तेरी कौन सके पहिचान ।
कणकणमें डूबे तीर्थंकर ऋषि मुनि महिमावान ॥
कौन तू तेरा कौन निशान ॥

तेरा कण पाकर बनते हैं जन सर्वज्ञ महान ।
पर क्या हो सकता है तेरी सीमाओं का ज्ञान ॥
कौन तू तेरा कौन निशान ॥

नित्य निरन्तर सूक्ष्म—प्रवाही तेरा अद्भुत गान ।
होता रहता पर सुन पाते हैं किस किसके कान ॥
कौन तू तेरा कौन निशान ।

दुनिया रोती मैं भी रोता जब बनकर नादान ।
कितने हैं वे देख सके जो तब तेरी मुसकान ॥
कौन तू तेरा कौन निशान ॥

तू है वही चूर करता जो मेरे सब अभिमान ।
रोते समय आँसुओंकी धाराका करता पान ॥
कौन तू तेरा कौन निशान ॥

इतना ही समझा हूं स्वामी तेरा अकथ पुरान ।
इतने में ही पूर्ण हुए हैं मेरे सब अरमान ॥
कौन तू तेरा कौन निशान ।

तेरा प्यार

मैंने चाहा तेरा प्यार
इसीलिये तेरे चरणों को ढूँढ फिरा संसार ॥ मैंने ॥
मन्दिर, मसजिद, गिरजा घर में
वन, उपवनमें, डगर डगर में
ढूँढ फिरा, पा सका न लेकिन तेरा कहीं निशान ।
तू तो था सब जगह, मगर था मुझे न इतना ज्ञान ।
इससे हुआ न तेरा साथ
तेरी पद-रज लगी न हाथ
निज-पर सुख कुछ हाथ न आया, हुई जिन्दगी भार ।
मैंने चाहा तेरा प्यार ॥ १ ॥

मैंने चाहा तेरा प्यार
छोटासा मैं जन्तु और यह है अनंत संसार ॥ मैंने ॥
जगह जगह ढूँढा है तुझको
पर, पथ का था ज्ञान न मुझको
चिल्ला चिल्ला थका सर्वदा बजा बजा कर ढोल
तू भी हँसता रहा, न बोला—भीतर ज़रा टटोल
तो भी रहा मान में चूर
ढोंगी, कुटिल, काल सम क्रूर
तेरा झूठा नाम सुना कर चकित किया संसार ।
मैंने चाहा तेरा प्यार ॥ २ ॥

मैंने चाहा तेरा प्यार
छल करनेमें छला गया मैं बनकर मूर्ख गमार । मैंने ।
समझा था तुझको छलता हूँ
अब समझा मैं ही जलता हूँ
तुझको धोखा देना ही था धोखा खाना आप ।
जब समझा तू मन में बैठा देख रहा सब पाप ॥
मेरा चूर हुआ अभिमान
तेरी देख पड़ी मुसकान
तेरे चरणों पर बरसाने लगा अश्रु की धार ।
मैंने चाहा तेरा प्यार ॥ ३ ॥

मैंने चाहा तेरा प्यार
तेरा आशीर्वाद मिला तब सूझ पड़ा संसार ॥ मैंने ।
जाति पाँति का मोह छोड़ कर
ऊँच नीच का भेद तोड़ कर
आया तेरे पास, दिखाया तूने अपना ठाट
सर्वधर्म सम भाव, अहिंसा का सिखलाया पाठ
मैंने पाया सत्य-समाज
जिसमें था तेरा ही साज
हुआ विश्वमय, विश्वबन्धु मैं तेरा खिदमतगार
मैंने चाहा तेरा प्यार ।

पट खोल खोल
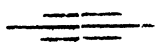
पट खोल खोल !
मंदिरके तू पट खोल खोल ! !
कबसे मैं यहाँ खड़ा हूँ ।
आशामय बना पड़ा हूँ ।
तेरे ही लिये अड़ा हूँ ।
निश्चयका बड़ा कड़ा हूँ ।
मुझसे दो बातें बोल बोल ! !
मंदिरके तू पट खोल खोल । । ॥ १ ॥
मैं ढूँढ़ फिरा जग सारा ।
भटका मैं मारा मारा ।
मैं ठगा गया बेचारा ।
तू मिला न मेरा प्यारा ।
मैं हार गया अब डोल डोल ।
मंदिरके तू पट खोल खोल । ॥ २ ॥
गिरजाघर में तू जाता ।
मसज़िदमें भी दिखलाता ।
मंदिरमें भी तू आता ।
पर पता न कोई पाता ।
तू है अलभ्य अनमोल मोल ।
मंदिरके तू पट खोल खोल । ॥ ३ ॥

शास्त्रोंने जिसको गाया ।
मुनियोंने जिसे मनाया ।
तीर्थंकरने जो पाया ।
थी सब तेरी ही छाया ।
तू है अडोल पर लोल लोल ।
मंदिरके तू पट खोल खोल ॥ ४ ॥
तेरा ही टुकड़ा पाकर ।
बनते हैं धर्म--सुधाकर ।
करुणाकर मनमें आकर ।
हममें मनुष्यता लाकर ।
चित् शान्ति सुधारस घोल घोल
मंदिरके तू पट खोल खोल ॥ ५ ॥
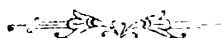
सत्य !

पढ़ी पुस्तके बहुत मगर ,
मिल सका न मुझको सम्यग्ज्ञान ।
नाना आसन लगा लगाकर,
ध्यान किया पर लगा न ध्यान ॥
दुनिया भरके मंत्र जपे,
पर हुई नहीं दुःखों की हानि ।
जपता यदि निःपक्ष हृदयसे,
सत्यदेव, मिलता सुख खानि ॥

जिज्ञासा

[१]

बता दो कौन से पथ में तुम्हें हम आज पायेंगे ।
कहो कैसे छटा अपनी प्रभो हमको दिखायेंगे ॥

[२]

विपद के मेघ छाये हैं न आँखों सूझ पड़ता है ।
कहो किस वक्त आकर आप हमको पथ दिखायेंगे ॥

[३]

गमारू गीत गाते ही निकाली जिंदगी सारी ।
तुम्हारी ही कृपासे नाथ कब गुण गान गायेंगे ॥

[४]

बकीं हैं धर्म के मद में हजारों गालियाँ हमने ।
कहो कब आप समभावी मधुर वीणा बजायेंगे ॥

[५]

लड़ाई द्वंद ही देखे खुदा के नाम पर हमने ।
कहो तो आप अपनी प्रेम मुद्रा कब दिखायेंगे ॥

[६]

तुम्हारे ही लिये आसन बनाया आज है दिल पर ।
कहो आकर हँसायेंगे न आकर या रुलायेंगे ॥

भगवन्

[१]

विजय हो बन्धुता की प्रेम का जयकार हो भगवन् ।
नहीं हो अब दुखी कोई परस्पर प्यार हो भगवन् ॥

[२]

ग़रीबी रह नहीं पाये, अमीरी में न धनमद हो ।
बढ़े सम्पत्ति अब सब की बढ़ा व्यापार हो भगवन् ॥

[३.]

अविद्या का अँधेरा यह, जगत में रह नहीं पावे ।
बढ़े सज्ज्ञान मानव ज्ञानका आगार हो भगवन् ॥

[४]

बनें ज्ञानी सभी मानव सदाचारी विनय-धारी ।
न कोरे फ़ेशनेबुल या रँगीले यार हों भगवन् ॥

[५]

ज़रासी झोंपड़ी भी हो सदा मंदिर सुशिक्षा का ।
दया से पूर्ण सच्ची सभ्यता का द्वार हो भगवन् ॥

[६]

अविद्या मूर्ति महिलाएँ कहीं भी रह नहीं पायें ।
बनें ये भारती देवी कि स्वर्गागार हो भगवन् ॥

[७]

अभी सद्धर्म की नौका भँवर में खा रही चक्कर ।
रखें उत्साह बल ऐसा कि बेड़ा पार हो भगवन् ॥

सत्यब्रह्म

[१]

तेरी ही सेवा करने को सब तीर्थंकर आते हैं,
ज्ञानदीप लेकर दुनिया को तेरा पथ दिखलाते हैं।
तेरी ही करुणा को पाकर 'बोधि' बुद्ध बन जाते हैं,
स्वार्थ जयी तेरे सेवक ही जग में जिन कहलाते हैं॥

[२]

योगेश्वर कहलाते हैं जो दिखलाते तेरी छाया,
मर्यादा पुरुषोत्तम की भी मूरति है तेरी माया।

तेरी ही एकाध किरण जब कोई जन है पाजाता,
ऋषि महर्षि अवतार महात्मा तीर्थंकर तब कहलाता ॥

[३]

तेरा ही करुणा-लव पाकर है मसीह होता कोई,
तेरा पथ दिखला कर जग के सकल पाप धोता कोई ।
तेरी आज्ञाके थोड़े से टुकड़े जो ले आता है,
जनसमाजका सच्चा सेवक पैगम्बर कहलाता है ॥

[४]

राम कृष्ण जरथुस्त बुद्ध जिन ईसा और मुहम्मद भी,
कन्फ्यूशियस आदि पैगम्बर तीर्थंकर अवतार सभी ।
तेरी करुणाके भूखे थे, थे समस्त तेरे चाकर,
अखिल जगत चलता है, तेरी ही करुणासे करुणाकर ॥

[५]

श्रद्धाका अवलम्ब, ज्ञानका मर्म, वृत्तका जीवन तू,
जनसमाज का मेरु दंड तू, धर्म कोषगृह का धन तू !
तेरी ही सेवा करने में सकल धर्म आ जाते हैं,
तेरी करुणा से भिक्षुक भी सारे सुख पा जाते हैं ॥

[६]

पक्षपात का नाम न रहता जहाँ पड़े तेरी छाया,
अंधकार में गिरता है वह जिसने तुझे न अपनाया ।
सब धर्मोका सार जगत्का प्राण सब सुखों का आकर,
सबके मनमें कर निवास कर विश्व शान्ति हे करुणाकर ॥

नाथ

नाथ कब तक तरसाओगे ।

[१]

मनुज रूप धर भले न आओ ।
अवतारी न छटा दिखलाओ ।
पर छोटी सी किरण क्या न मन में पहुंचाओगे ॥ नाथ ॥

[२]

कठिन आपदाएँ आवेंगी ।
पर टकराकर मर जावेंगी ।
अगर आप निज वरद हस्त हम पर फैलाओगे ॥ नाथ ॥

[३]

पक्षपात का भूत भगेगा ।
स्वार्थभाव का विष उतरेगा ।
श्वास-पवन से यदि थोड़े भी कण पहुँचाओगे ॥ नाथ ॥

[४]

आँसू बन कर मैल बहेगा ।
प्रेम पंथ प्रत्यक्ष रहेगा ।
मेरी इन आँखों में पदरज अगर लगाओगे ॥ नाथ ॥

[५]

तृष्णा अपना अन्त करेगी ।
युग युग की यह प्यास बुझेगी ।
अगर जमि पर थोड़े से सीकर बरसाओगे ॥ नाथ ॥

[६]

यदि थोड़ा भी दान न दोगे ।
तो आकर भी क्या कर लोगे ।
सुधा गरल होगी मनका यदि विष न बहाओगे ॥ नाथ ॥

[७]

करुणा का कण-दान दीजिये ।
इस अपूत को पूत कीजिये ।
तब छोटे से पावन मनका आसन पाओगे ॥ नाथ ॥

भगवान सत्य ।

[१]

तू जगत्-पिता वात्सल्य प्रेम रत्नाकर ।
देवाधिदेव सुख स्वतन्त्रता का आकर ॥
हैं राम, कृष्ण, जिन, बुद्ध, मुहम्मद सारे,
जरथुस्त, यीशु सब तेरे पुत्र दुलारे ॥

[२]

है देशकाल का भेद, मगर हैं भाई
आकर सबने तेरी ही महिमा गाई
सब ही लाये तेरी पदरज का अञ्जन
जिससे विवेक का भान हुआ, दुखभञ्जन ॥

[३]

छाती है जगमें जब कि घोर अँधियारी
अन्यायों से भर जाती पृथिवी सारी ।
बनता है कोई पुत्र दुलारा तेरा
वह विश्व मात्र का सेवक प्यारा तेरा ॥

[४]

होता है उसका उदय जगत् में रविसम।
मिट जाता जगका अन्धकार रंजोगम ॥
अत्याचारों का नाम न रहने पाता।
सर्वत्र शान्ति-साम्राज्य अनोखा छाता ॥

[५]

अब फिर भूला है जगत् तात तेरी छवि।
हो गया संतमस-लीन विश्व ज्यों गत रवि ॥
गिर पड़ा विपत् का और प्रलोभन का पवि
सब बुद्धि शून्य हो रहे महापंडित कवि ॥

[६]

अत्याचारों की निकल गई है शंका,
ताण्डव दिखलाकर बजा रहे हैं डंका।
हिंसा की चंडी मूर्त्ति नाच करती है,
भगवती अहिंसा का प्रभाव हरती है ॥

[७]

ले चुकी अहिंसा का आसन कायरता
बदमाशी कहला चुकी नीति तत्परता ॥
क्रूरत्व आज वीरत्व वेष लेता है।
हर कर सारे कल्याण दुःख देता है ॥

[८]

बलवान सब जगह सुविधाएँ पाते हैं।

निर्बल बेचारे धुतकारे जाते हैं ॥
अबलाओं को हैं लोग पीसते ऐसे
चक्की के दोनों पाट अन्न को जैसे ॥

[९]

बलवान स्वार्थ को धर्म धर्म कहता है ।
निर्बल मौनी बन सारे दुख सहता है ॥
समताभावों की हँसी उड़ायी जाती ।
है न्यायशीलता पद पद ठोकर खाती ॥

[१०]

तेरे पुत्रों ने था जो मार्ग दिखाया ।
उस पर लोगों ने ऐसा जाल बिछाया ।
सब भूले तुझको बना दलों का दलदल ।
उसमें फँसते हैं मरते हैं खोकर बल ॥

[११]

अब है उदारता का न नाम भी बाकी ।
गाली खाती फिरती है आज बराकी ॥
हर जगह संकुचितता है राज्य जमाती ।
जनता तेरा पथ छोड़ भागती जाती ॥

[१२]

ढोंगों ने धर्मासन भी छीन लिया है ।
धार्मिकता का भी चोला बदल दिया है ॥
मूसल से भारी पाप न पूछे जाते ।
निष्पाप क्रिया पर सब ही आँख उठाते ॥

[१३]

हैं सभी रूढ़ियाँ तेरे मार्ग कहातीं ।
पर तेरी ही आज्ञाएँ ठोकर खातीं ॥
बन रहे धर्मगृह द्वेष-दम्भ-क्रीड़ास्थल ।
है ताण्डव दिखला रहा सब जगह छल बल ॥

[१४]

जो धर्म सकल जग को पवित्र करता है ।
वह आज जगत की छाया से मरता है ॥
तरगये भील चाण्डाल जिसे पाने से ।
वह आज नष्ट होता उनके आने से ॥

[१५]

अब यह असत्य साम्राज्य न देखा जावे ।
जगको अब तेरा कोई भक्त बचावे ॥
अथवा मैं भी पा सकूँ चरण-रज तेरी ॥
तेरी पूजा में लगे शक्ति सब मेरी ॥

[१६]

करदूं पापों का नाश न कण भी छोड़ूँ ।
सदसद्विवेक से सबके बंधन तोड़ूँ ॥
मिट्टी में यह तन मिले नाम भी जावे ।
पर तेरी पूजा में न कमी रह पावे ॥

[१७]

पशु अबला निर्बल शूद्र नहीं पिस पावें ।
प्राणी प्राणी सब बन्धु बन्धु बन जावें ।

हो स्वार्थ-त्यागका भाव सभी के मनमें।
सर्वत्र दया सत्प्रेम रहे जीवन में ॥

[१८]

अनुचित बन्धन तो एक भी न रह पावे।
सर्वत्र हिताहित-बुद्धि मार्ग दिखलावे ॥
अपने अपने अधिकार रख सकें सब ही।
होगा मुझको संतोष नाथ ! बस तब ही।

[१९]

स्वामित्व न हो पशुबल-धनबल का सहचर।
दानवता का अधिकार न मानवता पर ॥
सच्चा सेवक ही बने जगत-अधिकारी।
स्वामित्व और सेवा होवें सहचारी ॥

[२०]

रह सके न कुछ भी वैर हृदय के भीतर।
बहजाय नयन के द्वार अश्रु बन बन कर ॥
हो सदा 'अहिंसा परमो धर्मः' की जय।
अन्याय रूढ़ियों अत्याचारों का क्षय ॥

[२१]

सब धर्मों में समभाव देव हो मेरा।
निष्पक्ष हृदय में नाम--मंत्र हो तेरा ॥
मैं देख देख कर चलूं चरण रज तेरी।
बस एक कामना यही प्रभो है मेरी ॥

सत्य-शरण

(१)

निशि दिन सत्य-शरण सुखदाई ।
सर्व-धर्म-समभाव प्रेम की पूजा है चतुराई ॥
निशि दिन सत्य-शरण सुखदाई ।

(२)

राम, कृष्ण, जिन वीर, बुद्ध पर जिसकी आज्ञा आई ।
यीशु, महम्मद पैगम्बर ने, जिसकी महिमा गाई ॥
निशि दिन सत्य-शरण सुखदाई ।

(३)

किसकी निन्दा किसकी पूजा सब ही भाई भाई ।
भक्त सभी भगवान सत्य के सब ने राह बताई ॥
निशि दिन सत्य-शरण सुखदाई ।

(४)

रख न अन्धश्रद्धा अब मनमें वह विपदाकी खाई ।
पक्षपात अभिमान छोड़कर सत्य-भक्त बन भाई ॥
निशि दिन सत्य-शरण सुखदाई ।
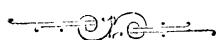
भगवती अहिंसा

अपनी झाँकी दिखला जा।
निर्दय स्वार्थ-पूर्ण हृदयों में शांति सुधा बरसाजा ॥ अपनी. ॥

(१)

तेरा वेष बनाकर आती,
तुझको ही बदनाम कराती;
आकर के इस कायरता का झंडा-फोड़ कराजा ॥ अपनी. ॥

(२)

वीर-पूज्य वीरों की माता,
तेरी कृपा वीर ही माता;
अकर्मण्य आलसी जनों को, यह संदेश सुनाजा ॥ अपनी. ॥

(३)

अस्त्र शस्त्र के संचालन में,
आततायियों के ताड़न में,
तेरी गुप्त मूर्ति रहती है, बस आवरण हटाजा ॥ अपनी. ॥

(४)

प्राणहीन पूजा या तप में,
दंभ-पूर्ण माला के जप में;
घोर स्वार्थ है आ कर बैठा, तू चकचूर कराजा ॥ अपनी. ॥

(५)

सज्जनता के रक्षण में तू,
दुर्जनता के तक्षण में तू;
विविधरूपधारिणी अंबिके, यह विवेक सिखलाजा ॥ अपनी. ॥

(६)

जब महिलाओं के सतीत्व पर,
टूट पड़ेंगे पाप निशाचर;
राम कृष्ण बन कर आवेगी, यह संदेश सुनाजा ॥ अपनी. ॥

(७)

निर्दय क्रियाकांड में पड़कर,
होंगे जब कर्तव्य-शून्य नर;
वीर-बुद्ध बनकर आवेगी, यह भविष्य बतलाजा ॥ अपनी. ॥

(८)

कोमलता का रूप दिखाने,
जन--सेवा का पाठ सिखाने;
ईसा के मुख से बोलेगी, यह रहस्य समझाजा ॥ अपनी· ॥

(९)

मनुष्यता का पाठ पढ़ाने,
बिछुड़ों को संगठित बनाने;
बन आवेगी देवी मुहम्मद, जगको ज्ञान कराजा ॥ अपनी. ॥

(१०)

अन्य-विविध--अवतार--धारिणी,
स्वच्छ-हृदय--नभतल--विहारिणी;
तेरे पुत्रों को पहिचानूँ, ऐसा मंत्र बताजा ॥ अपनी. ॥

देवी अहिंसा

[१]

देवि अहिंसे, करदे जगके दुःखों का निर्वाण ।
'त्राहि त्राहि' करनेवालों का करुणा कर कर त्राण ॥
तू ही परम धर्म कहलाती सकल सुखों की खानि ।
तेरे दृष्टि-तेजसे होती निखिल-दुःख-तम-हानि ॥

[२]

राम कृष्णका कर्मयोग तू जैनों का तपध्यान ।
बौद्धोंकी करुणा है तू ही तनमें प्राण समान ॥
तू ही सेवा धर्म यीशु का है तेरा इसलाम ।
तीर्थंकर पैग़म्बर पैदा करना तेरा काम ॥

[३]

तेरे ही पदरज अञ्जन से ज्ञान नयनकी भ्रान्ति ।
मिट जाती है सकल जगत को मिलती सच्ची शान्ति ॥
तेरे करतल की छाया से हटते सारे ताप ।
तेरा दुग्धपान करने से बढ़ता पुण्य कलाप ॥

[४]

तेराही अञ्चल बनता है अटल वज्रमय कोट ।
टकराकर निष्फल जाती है विपदाओं की चोट ॥
तेरे अंचलकी छाया में है सब जग का त्राण ।
शान्तिलाभ है वहीं वहीं है जीवन का कल्याण ॥

[५]

तीर्थंकर पैगम्बर देवी देव दिव्य अवतार ।
नर से नारायण बनते हैं हर कर भू का भार ।
हैं सब तेरे पुत्र सभी का करती तू निर्माण
महादेवि, सारे जगका तू करती दुखमे त्राण

[६]

सत्य अचौर्य ब्रह्म अपरिग्रह सब तेरी मुसकान ।
तेरी प्राप्ति दूर करती है मोह और अभिमान ॥
क्षमा शौच शम त्याग आदि सब हैं तेरे ही अंग
तबतक क्रिया न धर्म न जबतक चढ़ता तेरा रंग

[७]

महादेवि ! कल्याणि ! विश्व में गूँजे तेरा गान ।
तेरी तान तान पर नाचे यह ब्रह्मांड महान ॥
नाचे नियति सुमय गण नाचें नाचें धन बल ज्ञान ।
वैर भाव धुल जाय बने सब सच्चे बन्धु समान ॥

माता अहिंसा

[१]

माता करदे जग पर छाया ।
तेरे बिना न कभी किसीने थोड़ा भी सुख पाया ॥ माता. ॥
जब पशु के समान था मानव,
कुछ मनुष्य थे राक्षस दानव ।
'जिसकी लाठी, भैंस उसी की' एक यही था न्याय ।
यत्र तत्र सर्वत्र भरी थी बस निर्बल की हाय ॥
करती थीं तेरा आह्वान,
मन ही मन था तेरा ध्यान ।
तू ने ही उस घोर निशामें निज प्रकाश फैलाया ॥ माता. ॥

[२]

माता करदे जग पर छाया ।
हिंसा दुष्ट डाकिनी अपनी फैलाती है माया ॥ माता. ॥
अपना नाना रूप---बनाकर,
मंदिर में मसज़िद में जाकर ।
नंगा तांडव दिखलाती है अट्टहास के साथ ।
धर्म नाम लेकर धर्मों पर फेर रही है हाथ ॥
करदे उसका भंडाफोड़ ।
उसका मायागढ़ दे तोड़ ॥
अणु अणु चिल्ला उठे विश्वका 'प्रेम राज्य है आया' ॥ माता. ॥

[३]

माता करदे जग पर छाया ।
निर्दयताने नग्न नाच कर अद्भुत रूप बनाया । माता. ॥
इधर हमें है जगत विषम पथ ।
उधर उसे है स्वार्थ महारथ ॥
नचा नचाकर भगा भगा कर करती है आखेट ।
कुचली जाती पीठ और कुचला जाता है पेट ॥
रक्खा पूर्ण सभ्यता वेष ।
पर सब प्राण हुए निःशेष ॥
रखकर देवीवेष राक्षसीने क्या प्रलय मचाया ॥ माता. ॥

[४]

माता करदे जग पर छाया ।
वैर स्वार्थ संकुचित वासनाओंने जगत सताया ॥ माता. ॥
कहीं सम्प्रदायों को लेकर ।
कुलकी कहीं दुहाई देकर ॥
कहीं रंग पर कहीं राष्ट्र पर मरता मानव आज ।
वैर और मद की मारों से है चकचूर समाज ॥
सुरगति नरक बनी है हाय ।
यदि तू किसी तरह आजाय—
तो फिर नरक स्वर्ग बन जाये बदले सारी काया ॥ माता. ॥

मातेश्वरि

[१]

मातेश्वरि तेरा अंचल ।
सकल अनर्थों से रक्षित कर देता है मुझको बल ।
मातेश्वरि तेरा अंचल ॥

[२]

तेरे बिना न कभी किसी को पड़ सकती पलभर कल ।
तेरे अंचलकी छायामें मिट जाते छाया छल ॥
मातेश्वरि तेरा अंचल ॥

[३]

धर्म तत्त्वके विविध रूप हैं तेरी करुणाके फल ।
तू न जहां है वहां धर्म में भी है पाप निरर्गल ॥
मातेश्वरि तेरा अंचल ॥

[४]

तीर्थंकर पैगंबर ऋषि मुनि या अवतारों का दल ।
हैं तेरे ही पुत्र पिलाते हैं जगको शम रस जल ॥
मातेश्वरि तेरा अंचल ॥

[५]

तेरे अंचलकी छायामें, बीतें जीवन के पल ।
सब चंचल हो किन्तु नहीं हो तेरा अंचल चंचल ।
मातेश्वरि तेरा अंचल ॥

अहिंसा देवी

कहो कहो देवि ! छिपी कहां हो ।
पता बताओ रहती जहां हो ॥
पड़ा हमारे सिर दुःख जैसा ।
अराति के भी सिर हो न वैसा ॥ १ ॥

बढ़ी यहां भौतिक सम्पदा है ।
परन्तु आत्मा पर आपदा है ।
मनुष्यको खून चढ़ा हुआ है ।
विनाश की ओर बढ़ा हुआ है ॥ २ ॥

स्वजाति-भक्षी पशु भी न होते ।
मनुष्य ही लेकिन नीति खोते ॥
मनुष्य भी भक्ष्य हुआ यहां है ।
पशुत्व यों लज्जितसा कहां है ॥ ३ ॥

मनुष्य में भी समभाव छोड़ा ।
मनुष्यता से सहयोग तोड़ा ॥
हुए यहां युद्ध विनाशकारी ।
मनुष्यने मानवता विसारी ॥ ४ ॥

मनुष्य का पाशव-भाव प्यारे ।
लगे इसीसे बलहीन मारे ॥
सुशीलता का पद है न बाकी ।
हुई बड़ी दुर्गति न्याय्यता की ॥ ५ ॥

रँगे सभी के मन स्वार्थिता से ।
भला रँगें क्यों परमार्थिता से ।
बढ़ा अविश्वास अशान्तिकारी ।
हुए सभी चिन्तित—वृत्तिधारी ॥ ६ ॥

न देख पाई सुषमा तुम्हारी ।
दुखापहारी निज सौख्यकारी ॥
हुए हमारे गुण नष्ट सारे ।
मरे बने जीवित ही विचारे ॥ ७ ॥

पशुत्व के सद्म बने हुए हैं ।
अशान्ति में नित्य सने हुए हैं ॥
रही न मैत्री अविवेक आया ।
विपत्तियों ने दिनरात खाया ॥ ८ ॥

हुई हमारे मनमें निराशा ।
कृपा करो देकर पूर्ण आशा ॥
प्रसन्नता से हमको सम्हालो ।
विरोध का बन्धन तोड़ डालो ॥ ९ ॥

दीदार

है भला संसार भर का सत्य के दीदार में ।
चाहता जीवन बिताना सत्यके ही प्यार में ॥१॥
थे घमंडी जब, न तब था जीतमें भी यह मज़ा ।
आज जो मिलता मज़ा है प्रेमकी इस हार में ॥२॥
लड़ झगड़कर मर रहे थे हाय कल तक किस तरह ।
आज कैसे बँध रहे हैं प्रेम के इस तार में ॥३॥
कल यहां दोज़ख़ बना था; देखते हैं आज क्या ।
किस तरह झाँकी बनी है सत्यके दर्बार में ॥४॥
मज़हबों का, जातियों का आज पागलपन गया ।
अक्ल आई है ठिकाने युक्तियों की मार में ॥५॥
मज़हबों में जातियों में अब हुआ समभाव है ।
धर्म दिखता है हमें अब प्रेम के व्यवहार में ॥६॥
मन्दिरों में, मसाज़िदों में, चर्च में है भेद क्या ?
सत्य प्रभु तो सब जगह है सत्यमय आचार में ॥७॥
अब विवेकी हो गये हम, है सुधारकता मिली ।
बहगई है अन्धश्रद्धा ज्ञान-जल की धार में ॥८॥
मिल गई माता हमें है अब अहिंसा भगवती ।
भूल बैठे स्वार्थ सारे आज माँ के प्यार में ॥९॥
चाहिये दीदार तेरा और कुछ भी दे न दे ।
घुस पड़ा है अब भिखारी आज तेरे द्वार में ॥१०॥

म० सत्य का सन्देश

निष्पक्ष और निर्लेप, बुद्धि—
आकाश समान बनाओगे ।
भगवती अहिंसा की सेवा कर—
प्रेम——धर्म अपनाओगे ॥ १ ॥

भूतल में सब ही मित्र रहें
मन में न शत्रुता लाओगे ।
तो फिर मैं तुम से दूर नहीं ।
घर घर मेरा घर पाओगे ॥ २ ॥

म० अहिंसा का सन्देश

सब शान्त रहो सब शान्ति करो ।
दुःस्वार्थ न मन में आने दो ।
रगड़े झगड़े सब दूर करो ।
जगको प्रेमी बन जाने दो ॥ १ ॥

दुर्जनता का संहार करो ।
सज्जनता को जय पाने दो ।
हिंसा का राज्य न आने दो ।
पर कायर मत कहलाने दो ॥ २ ॥

भारत माता

हे भुवन–मोहनी प्यारी भारत माता ।
तेरे सुपुत्र हों अखिल जगत के त्राता ॥

तुझको विधिने सब–विध सम्पूर्ण बनाया ।
गंगा सा सुन्दर हार तुझे पहनाया ।
फिर अमल धवल हिमगिरिसा छत्र लगाया ।
रत्नाकर तेरे पद पखारने आया ॥

शुक पिक द्विरेफ दल तेरा ही गुण गाता ।
हे भुवन—मोहनी प्यारी भारत माता ॥ १ ॥

फल फूल खनिज सब रत्नों का आकर तू
जल दुग्ध सुधा रस-राजों का निर्झर तू ।
नाना ओषधि से सब को चिन्ता--हर तू ।
मधुकर नभचर जलचर थलचर का घर तू ॥

तन अजब अजायब घर सा है दिखलाता ।
हे भुवन—मोहनी प्यारी भारत माता ॥ २ ॥

सब ऋतुएँ सज शृंगार यहां आतीं हैं ।
अपना अपना नवनृत्य दिखा जातीं हैं ।
निज निज स्वर में तेरे गुणगुण गातीं हैं ।
तेरे आँगन में नाटक दिखलातीं हैं ॥

सब ओर प्रकृति ने भर दी है सुखसाता ।
हे भुवन--मोहनी प्यारी भारत माता ॥ ३ ॥

हैं राम कृष्ण से तूने पुत्र खिलाये।
जिन वीर बुद्ध से तेरी गोदी आये।
तेरे पुत्रों ने ऐसे कार्य दिखाये।
भगवान सत्य के परम दूत कहलाये।
तेरा सुपुत्र करुणा का पुत्र कहाता।
हे भुवन-मोहनी प्यारी भारत माता ॥ ४ ॥
सीता सावित्री तूने बहुत खिलाईं।
काली समान भी शक्ति देवियाँ पाईं।
विधिने विभूतियाँ गिन गिन कर पहुँचाईं।
सब दिव्य शक्तियाँ तुझे रिझाने आईं ॥
तेरी महिमा से कौन नहीं झुक जाता।
हे भुवन-मोहनी प्यारी भारत माता ॥ ५ ॥
अध्यात्म यहां तेरे आँगन में खेला।
नाना वादों के खिले चमेली बेला ॥
फुलवाड़ी में लग गया सुमन का मेला।
तेरे सुमनों का बना विश्वभर चेला ॥
था कर्मयोग योगेश सुरस बरसाता।
हे भुवन--मोहनी प्यारी भारत माता ॥ ६ ॥
करती रहती नाना पट परिवर्तन तू।
तुझको न क्रान्तिका डर है निर्भय मन तू।
सब धर्म जाति के जनका पैतृक धन तू।
है सकल सभ्यताओं का परम मिलन तू ॥
सब ओर समन्वय छाया जीवन दाता।
हे भुवन मोहनी प्यारी भारत माता ॥ ७ ॥

कोई हिन्दू या मुसलमान हो भाई।
जरथुस्त-भक्त, या सिक्ख, जैन, ईसाई ॥
या धर्म-हीन हो नास्तिकता हो छाई।
सब तेरे सुत तू बनी सभी की माई ॥

सब में है तेरा एक सरीखा नाता।
हे भुवन-मोहनी प्यारी भारतमाता ॥ ८ ॥

तेरी सेवा में सारी शक्ति लगाऊं।
तेरे कणकण पर जीवन दीप जलाऊं।
तेरी वेदी पर मन का सुमन चढ़ाऊँ।
मानवता का संगीत मनोहर गाऊं।

तेरा गुण गाते सुरगुरु भी न अघाता।
हे भुवन-मोहनी प्यारी भारतमाता ॥ ९ ॥

अपनी झाँकी फिर एक बार दिखलादे।
दुनिया पर जीवित शान्ति चन्द्रिका छादे।
सच्ची स्वतन्त्रता का सन्देश सुनादे।
घर घर में प्रेमामृत की धार बहादे ॥

सब वैर नष्ट हो प्रेम रहे मन भाता।
हे भुवन-मोहनी प्यारी भारतमाता ॥ १०. ॥

मानवता के सिरपर दानव न खड़ा हो।
अन्यायी, सत्पथ में आड़े न अड़ा हो।
मन प्रेम-पूर्ण हो पापों का न घड़ा हो।
साम्राज्यवाद के चक्कर में न पड़ा हो ॥

मानव का मानव रहे सर्वदा भ्राता।
हे भुवन-मोहनी प्यारी भारतमाता ॥ ११ ॥

सदसद्विवेक का सूर्य तपे तमहारी ।
भगवान सत्य के दर्शन हों सुखकारी ।
बनजाँय स्वार्थ-त्यागी सब ही नरनारी ।
भगवती- अहिंसा-सेवक प्रेम-पुजारी ॥
वैकुण्ठ दिखाई दे भूतल पर आता ।
हे भुवन-मोहनी प्यारी भारतमाता ॥ १२ ॥
हो सर्व-धर्म-समभाव सभी के मन में ।
यह जातिपाँति का रोग न हो जीवनमें ।
मानवता महँके तेरे श्वास पवन में ।
सत्प्रेम फले फूले तेरे आँगन में ॥
गुलजार चमन बनजाय सकल सुखदाता ।
हे भुवन-मोहनी प्यारी भारतमाता ॥ १३ ॥

प्यारा हिन्दुस्थान

प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ।
सेवा शक्ति प्रेम की धारा ॥
यहां प्रकृति की छटा निराली ।
सब ऋतुओं की है हरियाली ।
फूल खिले हैं डाली डाली ॥
कण कण जिसका लगता प्यारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ १ ॥
दिग्विजयी गिरिराज हिमालय ।
गंगा के निर्मल जल की जय ।
प्रकृति नटी नचती है निर्भय ।
है विस्तीर्ण समुद्र किनारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ २ ॥
सब ऋतु के अनुकूल फूल हैं ।
अन्न शाक फल कन्दमूल हैं ।
मन चाहे फल रहे तूल हैं ।
ईश्वर का है परम दुलारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ ३ ॥
राम कृष्ण से वीर यहां थे ।
वीर बुद्ध से धीर यहां थे ।
व्यास ज्ञान-गंभीर यहां थे ।

अनुपम है सौभाग्य सितारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ ४ ॥

नानक और कबीर यहां थे ।
एक एक से पीर यहां थे ।
सच्चे सन्त फकीर यहां थे ।

मकसद एक रूप था न्यारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ ५ ॥

जैमिनि कपिल बृहस्पति धीधन ।
गौतम शुक्र कणाद तर्कमन ।
सब ने दिया ज्ञान में जीवन ।

बही विविध दर्शन की धारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ ६ ॥

महासती सीता सी पाई ।
सरस्वती विदुषी बन आई । ॥
लक्ष्मी रणरंगिणी दिखाई ।

अद्भुत नारीरत्न-पिटारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ ७ ॥

भूपति त्याग प्रेम के आकर ।
सारा विश्व जिन्हें अपना घर ।
थे अशोक से नृपति यहां पर ।

जिनका धर्म देख जग हारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ ८ ॥

विक्रम से रणधीर यहां थे ।
अकबर आलमगीर यहां थे ।
और शिवाजी वीर यहां थे ।
चकित किया था यह जग सारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ ९ ॥

विविध कला विज्ञान यहां पर ।
फूले फले फिरे भूतल भर ।
संयम और सभ्यता का घर ।
बना सदा सुख-शान्ति-किनारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ १० ॥

हिन्दू मुसलमान हैं भाई ।
बौद्ध सिक्ख जैनी ईसाई ।
प्रेम नाम की महिमा गाई ।
रहा सभी में भाई चारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ ११ ॥

अब उन्नति गिरिपर चढ़ जाये ।
जगका परम मित्र कहलाये ।
सब को प्रेम पाठ सिखलाये ।
मानवता का हो ध्रुवतारा ।
प्यारा हिन्दुस्थान हमारा ॥ १२ ॥

भावनागीत

(सर्व-धर्म-समभाव)

(१)

सत्य अहिंसा के पालन में, जीवन यह होजाय व्यतीत ।
पक्षपात से दूर रहे मन, दुःस्वार्थों से रह अतीत ॥
सर्व-धर्म-समभाव न भूलूँ, अहंकार का कर अवसान ।
मन मन्दिर में सब धर्मोंके, तत्त्वा का मैं गाऊं गान ॥

(२)

बुद्धि विवेक न छोड़ूं क्षणभर, आने दूं न अन्धविश्वास ।
परम्परा के गीत न गाऊं, करूं न मानवता का ह्रास ॥
सकल महात्मा पुरुषों में हो, समता का न कभी विच्छेद ।
हैं ये विश्व-विभूति न इन में, हो मेरा तेरा का भेद ॥

(३)

राम महात्मा के पथ पर हो, मेरा यह जीवन कुर्बान ।
मर्यादा पर मरना सीखूं, सीखूं धनमद का अपमान ॥
योगेश्वर श्रीकृष्णचन्द्र से, सीखूं कर्मयोग का गान ।
योग भोग का करूं समन्वय, करूं फलाशा का अवसान ॥

(४)

महावीर स्वामी से सीखूं, दिव्य अहिंसा दर्शन ज्ञान ।
कर दूं सहनशीलता पाकर, जन सेवा में जीवनदान ॥
बुद्ध महात्मा के जीवन से, पाऊं दया और सद्बोध ।
दुनिया का दुख दूर करूं मैं, कर दूं पापों का पथरोध ॥

(५)

सीखूं सेवापाठ सर्वदा, रख ईसामसीह का ध्यान ।
बनूं दुखी को देख दुखी मैं, करूं न दुख में दुख का भान ॥
सीखूं वीर मुहम्मद से मैं, भ्रातृभाव का सद्व्यवहार ।
साम्यभाव का पाठ पढ़ूं मैं, मानवता का करूं प्रचार ॥

(६)

देवजयी जरथुस्त महात्मा. कन्फ्यूसियस नीति-दातार ।
सकल महात्मा वंद्य मुझे हों विश्वबन्धुता के अवतार ॥
मन्दिर जाऊं मसजिद जाऊं, जाऊं गिरजाघर के द्वार ।
सब में है भगवती अहिंसा, लगा सत्य प्रभु का दर्बार ॥

(सर्वजाति-समभाव)

(७)

जातिपाँति का भेद भुला दूं, रक्खूं सर्व-जाति-समभाव ।
कुलकी उच्चनीचता भूलूं, कोई रहे रंक या राव ॥
स्वार्थ-हीन सच्चे सेवक को, समझूं मैं श्रीमान कुलीन ।
स्वार्थ-मूर्त्ति पर-पीड़क को ही, समझूं नीच तुच्छ अतिदीन ॥

(८)

मानवता का बनूं पुजारी, विश्व-प्रेम हो सदा अनन्त ।
जातिमदों को विफल बना कर, अहंकार का करदूं अन्त ॥
समझूं नहीं अछूत किसी को, सब मनुष्य हों बन्धुसमान ।
भूल चूक से भी न करूं मैं, इनका थोड़ा भी अपमान ॥

(९)

पतित हो कि हो दीन सभी में, सत्य धर्म का करूं प्रचार ।
स्वयं न छीनू छिनने न दूं, जन्मसिद्ध सबके अधिकार ॥
ठेका हो न धर्म कार्यों का, कर दूं मैं इसको निःशेष ।
गुण का आदर रहे जगत में, करे न तांडव कोई वेष ॥

(१०)

प्रेम की न हो सीमा मेरे, ग्राम प्रान्त कुल जाति स्वदेश ।
विश्व देश हो, मनुज जाति हो, हो न क्षुद्रता का लवलेश ॥
जिधर न्याय हो उधर पक्ष हो, हो विपक्ष में अत्याचार ।
पीड़ित जन बान्धव हों मेरे, उनसे करूं हृदय से प्यार ॥

(११)

नर नारी का पक्ष नहीं हो, मानूं दोनों के अधिकार ।
करें परस्पर त्याग सर्वदा, हो न किसी को कोई भार ॥
प्रतिद्वंदिता रहे न उनमें, दो तनपर हो जीवन एक ।
रंग एक हो ढंग एक हो, स्वार्थों का न रहे अतिरेक ॥

(नीतिमत्ता)

(१२)

मित्र शत्रु मध्यस्थ जनों पर, करूं न थोड़ा भी अन्याय ।
न्यायमार्ग के रक्षण में ही, तन मन धन जीवन लग जाय ॥
सकल जगत की सुख साता में, समझूं मैं अपना कल्याण ।
जहां जरूरत हो जीवन की, वहां लगा दूं अपने प्राण ॥

(१३)

करुणाशील हृदय हो मेरा, रहूं सदा हिंसा से दूर।
दिल न दुखाऊं कभी किसीका, किसी तरह भी बनूं न क्रूर॥
जिऊँ जगत को भी जीने दूं, पालन करूं सदा यह नीति।
सौम्यरूप हो सब कुछ मेरा, मुझसे हो न किसी को भीति॥

(१४)

विविध कष्ट सह कर भी बोलूं, सदा सभी से सच्ची बात।
कभी न वंचित करूं किसीको, हो न कभी कटुवचनाघात॥
कोमल प्रेमजनक शब्दों का, हो मुझसे सर्वदा प्रयोग।
करूं न मैं अपमान किसी का, और न हो गाली का रोग॥

(१५)

चौर्य-वासना से थोड़े भी, परधन को न लगाऊं हाथ।
प्रगट या कि अप्रगट रूप में, दूं न कभी चोरों का साथ॥
न्यायमार्ग से जो कुछ पाऊँ, उसमें रहे पूर्ण संतोष।
अटल रहे ईमान सर्वदा, निर्धनता में भी निर्दोष॥

(१६)

जीवन अतिपवित्र हो मेरा, दूर रहे मुझसे व्यभिचार।
प्रेम रहे, पर प्रेम नाम पर, हो न हृदय यह पापागार॥
नारी पर दुर्दृष्टि नहीं हो, हो तो ये आँखें दूं फोड़।
अगर कुचेष्टा करें हाथ तो, दूं इनकी हड्डियाँ मरोड़॥

(१७)

धन-संयम पालन करने को करूं लालसाओं को चूर।
वैभव में न महत्त्व गिनूं मैं, रहूं सदा धनमद से दूर॥

संग्रह की न लालसाएँ हों, पाऊं धन करदूं मैं दान।
साथ न आता साथ न जाता, फिर क्यों संग्रह क्यों अभिमान॥

आत्मसंयम

(१८)

पागल बना न पावे मुझको, जीवन--शत्रु दुष्टतम क्रोध।
क्षमा भाव हो सब पर मेरा, करूं कुपथ का मैं अवरोध॥
बनूं पाप का ही वैरी मैं, पापी को समझूं बीमार।
जिस की जैसी बीमारी हो, उसका वैसा हो उपचार॥

(१९)

बल यश बुद्धि विभव सुन्दरता कुल आदिक का न रहे मान।
विनय-मूर्त्ति होने को समझूं, गौरव की सच्ची पहिचान॥
आत्म-प्रशंसा करूं न मदवश ईर्ष्या से मैं करूं न हाय।
कभी न यह चरितार्थ करूं मैं, 'अधजल गगरी छलकत जाय'॥

(२०)

रहूं दम्भ से दूर सर्वदा, हो न तनिक भी मायाचार।
ढोंगों को निर्मूल करूं मैं, माया-शून्य रहे आचार॥
ख्याति लाभ के लालच से मैं, नहीं करूं झूठा तप त्याग।
अन्य ढोंग या वंचकता में, थोड़ा भी न रहे अनुराग॥

(२१)

मैं मन की निर्लोभवृत्ति को, समझूं शौच धर्म का सार।
बनूं स्वच्छतासेवी फिर भी, करूं न छूत अछूत विचार॥
हिंसाहीन स्वच्छ खाद्यों को, समझूं भोजन का सामान।
शौच धर्म की आड़ लगाकर, करूं नहीं पर का अपमान॥

(२२)

सेवा करने में सहना हो, भूख आदि शारीरिक क्लेश ।
तो भी रहूं प्रसन्न हृदय में, आने दूं न खेद का लेश ॥
सार्थक कष्ट सहन को ही मैं, समझूं बाह्य तपों का काम ।
अन्य निरर्थक कष्ट सहन को, समझूं मैं केवल व्यायाम ॥

(२३)

सच्चा तप है शुद्ध हृदय से कृत पापों का पश्चात्ताप ।
सेवा विनय ज्ञान से होता, सत्य तपस्याओं का माप ॥
बनूं तपस्वी ऐसा ही मैं, स्वार्थहीन छल छद्मविहीन ।
स्वार्थ वृत्तियाँ नष्ट करूं मैं, रहूं सदा सेवा में लीन ॥

(२४)

हो न स्वाद-लोलुपता मुझमें, जिह्वा को करलूं स्वाधीन ।
सरस हो कि नीरस भोजन हो, रहूं सदा समता में लीन ॥
जीवित और स्वस्थ रहना ही, हो मेरे भोजन का ध्येय ।
सकल इन्द्रियाँ हों वश मेरे , सकल दुर्व्यसन हों अज्ञेय ॥

विश्वप्रेम

(२५)

दुखित जगत के आँसू पोछूँ, हो सदैव यह मेरी चाह ।
दुनिया का सुख हो सुख मेरा, दुनिया का दुख अश्रु-प्रवाह ॥
दुखित प्राणियों की सेवा में, मरते मरते करूं न आह ।
काँटों में बिछ कर भी दूं मैं, पंथ-हीन जनता को राह ॥

(२६)

भूखे को भोजन सदैव दूँ, प्यासे को पानी का दान।
गुरुपन का अभिमान न रखकर, दूं भूले भटके को ज्ञान ॥
सेवा करूं सदैव दीन की, रोगी को दूं औषध पान।
पीड़ित जन के संरक्षण में, हो मेरा जीवन कुर्बान ॥

(२७)

जग की माया जग की समझूं, पाऊं तो करदूं मैं त्याग।
रहूं अकिंचन सा बनकर मैं,तृष्णा का लगाऊं दाग ॥
सुख दुख में समता हो मेरे डस न सके भयरूपी नाग।
मरने की न भीति हो मुझको, जीने का न अन्ध अनुराग ॥

(२८)

मैत्री हो समस्त जीवों में, विश्वप्रेम का बनूं अगार।
गुणियों में प्रमोद हो मेरा, हो उनका पूजा सत्कार ॥
पर दुखको निज दुख सम समझूं, दुखित जीव पर हो कारुण्य।
दुर्जन पर माध्यस्थ्य भाव हो, समझूं मैं सेवा में पुण्य ॥

कर्मयोग

(२९)

रहूं सदा उद्योगी बनकर, कर्मयोग हो जीवनमंत्र।
करूं सभी कर्तव्य किन्तु हो, हृदय वासना-हीन स्वतन्त्र।
अकर्मण्य बनकर न करूं मैं, ख्याति लाभ पूजा वश त्याग ॥
वेष दिखा कर हो न त्याग के, नाटक में मुझ को अनुराग ॥

(३०)

छोटा सा यह जीवन मेरा, हो न किसी के सिर पर भार ।
रहूं परिश्रमशील सर्वदा, श्रम को कहूं न पापाचार ॥
सह न सकूं दुर्बल दीनों पर, बलवानों के अत्याचार ।
तत्पर रहूं न्यायरक्षण में, हरता रहूं सदा भूभार ॥

(३१)

कायरता न फटकने पावे, बनूं मौत से निर्भय वीर ।
प्राण हथेली पर लेकर मैं, बढ़ूं रहूं विपदा में धीर ॥
विपत विरोध उपेक्षा मिलकर, कर न सकें साहसका नाश ।
कर न सकें असफलताएँ भी, कार्यक्षेत्र में मुझे निराश ।

(३२)

धर्म अर्थ हो काम मोक्ष हो, रक्खूं मैं चारों पुरुषार्थ ।
एकांगी जीवन न बनाऊं, सकल--समन्वय है परमार्थ ॥
सभी रसों का समय समय पर करता रहूं उचित उपयोग ।
करुणा वीर हास्य वत्सलता, सब का निर्विरोध हो भोग ॥

(३३)

दुनिया की नाटकशाला में, खेलूं सभी तरह के खेल ।
लेकिन पाप न आने पावे, हो न सुधा में विषका मेल ॥
कर्मों में कौशल हो मेरे हो सब चिंताओं का अन्त ।
मुखमुद्रा कैसी भी हो पर, रहे हृदय में हास्य अनन्त ॥

(३४)

रहूं अहिंसा की गोदी में, सत्य करे लालन मेरा ।
न्याय नीतियों के कर तल पर, हो सदैव पालन मेरा ॥

सत्य अहिंसा की सन्तति बन, शुद्ध मनुष्य कहाऊं मैं ।
परहित और न्याय-रक्षण कर, सत्यभक्त बन जाऊं मैं ॥

क्या

सत्य अहिंसाको पाया तो, और रहा तब पाना क्या रे,
उनका गाया गान अगर तो, और रहा फिर गाना क्या रे ॥

[१]

सर्वधर्मसमभाव न सीखा, तो फिर सीख सिखाना क्या रे,
सब की जाति समान न देखी, तो फिर प्रेम दिखाना क्या रे ॥

[२]

जो न सुधारक तू कहलाया, तो मुखिया कहलाना क्या रे,
मन को जो न कभी नहलाया, तो तनको नहलाना क्या रे ॥

[३]

अन्यायों पर की न चढ़ाई, तो फिर बाँह चढ़ाना क्या रे,
सद्गुणगण को जो न बढ़ाया, तो फिर ठाठ बढ़ाना क्या रे ॥

[४]

नीति मरी ईमान मरा तो, और रहा मरजाना क्या रे,
मन की गगरी प्रेम भरी तो, और रहा भर जाना क्या रे ॥

[५]

हित अनहित पहिचान न पाया, तो जग को पहिचाना क्या रे,
दुखियों की कुटियों न गया तो, फिर मंदिर का जाना क्या रे ॥

[६]

परदुख में आँसू न बहाये, निज दुख देख बहाना क्या रे,
सेवक जो जग का न कहाया, तो भगवान कहाना क्या रे ॥

[७]

दुखियो के मन पर न चढ़ा तो, तीर्थों पर चढ़ जाना क्या रे,
विपदा में हँसना न पढ़ा तो, पोथों का पढ़ जाना क्या रे ॥

[८]

कायरता यदि हट न सकी तो, निर्बलता हटजाना क्या रे,
कर्मठता यदि घट न सकी तो तन बल का घट जाना क्या रे ॥

[९]

कर कर्तव्य न पाठ पढ़ाया, बक बक पाठ पढ़ाना क्या रे,
जीवन देकर सिर न चढ़ाया, तो फिर भेंट चढ़ाना क्या रे ॥

[१०]

सुखदुख में समभाव न जाना, तो जीवनमें जाना क्या रे,
जो न कला जीवन की आई, तो दुनिया में आना क्या रे ॥

[११]

जो मन की कलियाँ न खिलीं तो यौवनका खिल जाना क्या रे,
सत्येश्वर की भक्ति मिली तो, ईश्वर में मिल जाना क्या रे ॥

राम-निमंत्रण

हे राम विपत् पर रामबाण बनजाओ ।
भूभार-हरण के लिये धरा पर आओ ॥

(१)

भूभार बढ़ा है, पाप बढ़े जाते हैं ।
अत्याचारों के तांडव दिखलाते है ॥
दुर्जन दुःस्वार्थी पापी इठलाते हैं ।
सज्जन परोपकारी न चैन पाते हैं ॥
आओ अन्यायों का विनाश करजाओ ।
भूभार-हरण के लिये धरा पर आओ ॥

(२)

अपनी विपदा को आप बढ़ाया हमने ।
धन-धान्य स्वत्व अधिकार गमाया हमने ।
होकर मनुष्य मानुष्य न पाया हमने ।
इस घर को भी परदेश बनाया हमने ॥
आओ स्वतंत्रता की झाँकी दिखलाओ ।
भूभार-हरण के लिये धरा पर आओ ॥

(३)

नारीत्व आज पद-दलित हुआ जाता है ।
दाम्पत्य-प्रेम पदपद ठोकर खाता है ।
भ्रातृत्व और मित्रत्व न दिखलाता है ।
सज्जनता पर दौर्जन्य विजय पाता है ।
अन्धेर मचा है आओ इसे मिटाओ ।
भूभार-हरण के लिये धरा पर आओ ॥

(४)

दुर्दैववादने पौरुष मार हटाया ।
भीरुत्व, दया का छद्म-वेष धर आया ।
कायरताने जड़ता का राज्य जमाया ।
हममें उत्तरदायित्व नहीं रह पाया ॥
आओ हमको पुरुषार्थी वीर बनाओ ।
भूभार-हरण के लिये, धरा पर आओ ॥

(५)

नैतिक मर्यादा नष्ट होरही सारी ।
बन रहा जगत है, केवल रूढ़ि-पुजारी ।
सदसद्विवेकमय बुद्धि गई है मारी ।
है तमस्तोमसा व्याप्त दृष्टि-अपहारी ॥
तुम सूर्यवंश के सूर्य प्रकाश दिखाओ ।
भूभार-हरण के लिये धरा पर आओ ॥

(६)

विपदाएँ अपना भीष्म-रूप बतलातीं ।
मन-मन्दिर में भारी तूफ़ान मचातीं ।
तांडव दिखलातीं फिरतीं हैं मदमातीं ।
धीरज विवेक बल तहस नहस कर जातीं ॥
आओ जंगल में मंगल हमें सिखाओ ।
भूभार-हरण के लिये धरा पर आओ ॥

(७)

ये बिछा रहे हैं जाल असंख्य प्रलोभन ।
हैं लूट रहे सर्वस्व दिखाकर जड़धन ॥
निःसत्त्व बताते हैं, कर्तव्य चिरन्तन ।
करते हैं ये उद्देश्य-हीन चञ्चल मन ।
आओ प्रलोभनों को अब मार हटाओ ।
भूभार-हरण के लिये, धरा पर आओ ॥

(८)

तुम सत्य अहिंसा के हो पुत्र दुलारे ।
वीरत्व त्याग धैर्यादि गुणों के प्यारे ॥
तुम कर्मयोग की मूरति बन्धु हमारे ।
तुम अन्धे जग के लिये नयन के तारे ।
आओ घर घर में राम जन्म करवाओ ।
भूभार-हरण के लिये धरा पर आओ ॥

महात्मा राम

(१)

नैतिकता की मर्यादा पर सर्वस्व दान करनेवाला ।
जंगल में भी जाकर मंगल का नव–वसन्त भरनेवाला ॥
हँसते हँसते अपने भुजबल से दुख- समुद्र तरनेवाला ।
तू मर्यादा--पुरुषोत्तम था संसार-दुःख हरनेवाला ॥

(२)

तू सूर्यवंश का सूर्य रहा जगको प्रकाश देनेवाला ।
अवतार वीरता का था तू दुखियों की सुध लेनेवाला ॥
यद्यपि तू रघुकुलदीपक था पर सबका नयन सितारा था।
बंधन कुलजाति न था तुझको तू विश्व मात्रका प्यारा था॥

(३)

तुझको जैसा सिंहासन था वैसी ही वनकी कुटिया थी ।
जैसा सोनेका पात्र तुझे वैसी ताँबेकी लुटिया थी ॥
तेरा था भोगी वेष मगर भीतर से था योगी सच्चा ।
तू अग्नि-परीक्षाओं में भी पड़कर न कभी निकला कच्चा॥

(४)

तेरा पत्नीव्रत सतीजनों के पातिव्रत्य समान रहा ।
तुझको प्रेमीके साथ पुजारी बनने का अरमान रहा ॥
सीता बिछुड़ी अथवा त्यागी तुझको उसका ही ध्यान रहा।
ऋषि ब्रह्मचारियों से भी बढ़कर था तेरा ईमान रहा ॥

(५)

तू था मनुष्यता का पूजक था सारा जगत समान तुझे ।
तेरा बंधुत्व विशाल रहा सम थे लक्ष्मण हनुमान तुझे ॥
केवट हो, कपि हो, शबरी हो तूने सबको अपनाया था ।
जो जो कहलाते थे अनार्य छाती से उन्हें लगाया था ॥

(६)

शबरी के जूंठे बेर ग्रहण करने में नहीं लजाया था ।
तूने पवित्रता शौच धर्म बस प्रेम-भक्ति मे पाया था ॥
कुल जातिपाँति या उच्चनीच सबका रहस्य समझाया था ।
मानव का धर्म सिखाया था कुलमद को मार भगाया था ॥

(७)

तूने राक्षसपन नष्ट किया पर राक्षस नृपति बनाया था ।
सम्राट बना था पर तूने साम्राज्यवाद ठुकराया था ॥
दुर्जनता के क्षालन में तू सज्जनता के लालन में तू ।
भगवती अहिंसा के दोनो रूपोंके परिपालन में तू ॥

(८)

मर मिटने को तैयार रहा अन्याय अगर देखा तूने ॥
भगवान सत्य को ही दुनिया का सच्चा बल लेखा तूने ।
राक्षसताका सरदार मिला जिसका असंख्य दल बल छल था ।
तू निराधार था सिर्फ तुझे अपने ही हाथों का बल था ॥

(९)

पर तू निर्भय हो गर्ज उठा अन्याय नहीं करने दूंगा ।
सीता जावे मर मिटे राम पर न्याय नहीं मरने दूँगा ॥

जगकी पवित्रतम वस्तु सतीकी लाज नहीं हरने दूँगा।
अत्याचारी दुष्टों से मैं पृथिवी न कभी भरने दूँगा॥

(१०)

भुजबलका कुछ अभिमान न था वैभव भी तुझे न प्यारा था।
भय न था लालसा थी न तुझे तू निर्भयता का धाम था।
भगवान सत्यने वरद हस्त तेरे ऊपर फैलाया था
भगवती अहिंसाने अपने अंचल में तुझे बिठाया था॥

(११)

विजयी बनकर साम्राज्य लिया फिर भी वनवासी बना रहा।
लंकाको ठुकराया तूने तू अनासक्ति में सना रहा॥
सर्वस्व त्याग करने में भी तूने न तनिक संकोच किया।
जनता-रंजन मर्यादा के रक्षणको तूने क्या न दिया॥

(१२)

कर्तव्य-यज्ञ की वेदीपर सीता का भी बलिदान किया।
आँखों में आंसू भरे रहे पर मुखको कभी न म्लान किया॥
तूने अपना दिल मसल दिया दुनियाके हित विषपान किया।
तू सच्चा योगी बना रहा जीवन सुखका अवसान किया॥

(१३)

आदर्श पुत्र था, त्यागी था, सेवा ही तेरा धर्म रहा॥
तूने विपत्तियों की वर्षाको हँस हँसकर सर्वदा सहा।
पुरुषोत्तम और महात्मा तू घर घरमें ख्याति हुई तेरी।
तेरे पद-चिह्न मिलें मुझको इच्छा है एक यही मेरी॥

राम

दिखा दो अपनी झाँकी राम !

कायर मनमें साहस लादो,
वैभवका कुछ त्याग सिखादो,
दुखमें भी हँसना सिखलादो,
हो जीवन निष्काम,
दिखादो अपनी झाँकी राम ॥ १ ॥

मरुथलमें भी जल बरसादो,
निर्बलमें भी बल बरसादो,
जंगल में मंगल बरसादो ।
जीवन दो सुखधाम,
दिखा दो अपनी झाँकी राम ॥ २ ॥

दे दो अपनी करुणा का कण,
सीख सकें पूरा करना प्रण,
रहे न कोई जग में रावण ।
रहे न जीवन श्याम,
दिखा दो अपनी झाँकी राम ॥ ३ ॥

मर्यादा पर मरना सीखें,
विपदाओं को तरना सीखें,
दुनिया का दुख हरना सीखें ।
लेकर तेरा नाम,
दिखादो अपनी झाँकी राम ॥ ४ ॥

वंशीवाले

वंशीवाले तनिक सुनाजा दुनियाको वंशी की तान ॥

(१)

जीवनमें रसधार बहाजा ।
सकल-रसोंका सार बहाजा ।
तार तारमें प्यार बहाजा ।
हों पूरे अरमान ॥

वंशीवाले तनिक सुनाजा दुनियाको वंशी की तान ॥

(२)

सकल कलाओं का तू स्वामी ।
धर्मी अर्थी मोक्षी कामी ।
सत्य अहिंसा का अनुगामी ।
नामी कृपा-निधान ॥

वंशीवाले तनिक सुनाजा दुनियाको वंशी की तान ॥

(३)

पत्थर सा यह दिल पिघलाजा ।
ज्वलित नयन से नीर बहाजा ।
युग युग की यह प्यास बुझाजा ।
करें सुधाका पान ॥

वंशीवाले तनिक सुनाजा दुनियाको वंशी की तान ॥

(४)

यह जीवन रस-हीन बने जब ।
शोक सिन्धुमें लीन बने जब ।
अकर्मण्यताधीन बने जब ।
हो तब तेरा ध्यान ॥
वंशीवाले तनिक सुनाजा दुनियाको वंशी की तान ॥

(५)

बाहर जब होली मचती हो ।
घरमें तब वसन्त रचती हो ।
विपदाओं में भी नचती हो ।
मनमोहन मुसकान ॥
वंशीवाले तनिक सुनाजा दुनियाको वंशी की तान ॥

(६)

अमर सत्य-संगीत सुनाजा ।
प्राणोंको पीयूष पिलाजा ।
तान तानमें रस बरसाजा ।
आजा कर रसदान ॥
वंशीवाले तनिक सुनाजा दुनियाको वंशी की तान ॥

(७)

मेरे मन-मन्दिर में आजा ।
मेरा टूटा तार बजाजा ।
सूना हृदय सजाजा, गाजा ।
कर्मयोग का गान ॥
वंशीवाले तनिक सुनाजा दुनियाको वंशी की तान ॥

महात्मा कृष्ण

तू था जीवन का रहस्य दिखलानेवाला
कर्मों में कौशल्य-पाठ सिखलानेवाला ॥
योग भोगका सत्य समन्वय करनेवाला ।
सूखे जीवन में अनन्त रस भरनेवाला ॥ १ ॥

सच्चा योगी और प्रेम-पथ पथिक रहा तू ।
विषयवासनाके प्रवाह में नहीं बहा तू ॥
नयी प्रीति की रीति योगके संग सिखाई ।
मानों अम्बुदवृन्द संग चपला चमकाई ॥ २ ॥

जब समाज की दशा होरही थी प्रलयंकर ।
अत्याचारी दुष्ट बने थे भूत भयंकर ॥

मातपिताको पुत्र क़ैदखाना देता था ।
बहिन-बेटियों का सुहाग भी हर लेता था ॥ ३ ॥
हलचल का था राज्य नीति का नाम नहीं था ।
थे पेटार्थू लोग, सत्यसे काम नहीं था ।
सभ्यजनों में भी न मान महिला पाती थी ।
जगह जगह बीभत्स वासना दिखलाती थी ॥ ४ ॥
ऐसा कोई न था समस्या जो सुलझाता ।
दिग्विमूढ़ मानव समाज को पथ बतलाता ॥
न्याय और सत्य की विजय को जान लड़ाता ।
पीड़ित की सुनकर पुकार जो दौड़ा आता ॥ ५ ॥
लाखों आँखें बाट देखती थीं तब तेरी ।
उनको होती थी असह्य क्षण क्षणकी देरी ॥
अगणित आहें रहीं बाष्पमय वायु बनातीं ।
कर करुणा संचार हृदय तेरा पिघलातीं ॥ ६ ॥
तू अदृश्य था किन्तु बुलाते थे तुझको सब ।
कहता था संसार 'अरे आवेगा तू कब' ?
'कब जीवन की कला जगत् को सिखलावेगा ?
सत्य अहिंसाका पुनीत पथ दिखलावेगा' ॥ ७ ॥
आख़िर आया, हुई भयंकर वज्र गर्जना ।
दहल उठे अन्याय, पाप की हुई तर्जना ॥
दुखी जगत् को देख सभीको गले लगाया ।
आख़िर तू रो पड़ा, हृदय तेरा भर आया ॥ ८ ॥

मिला तुझे भगवान सत्यका धाम दुःखहर ।
मन ही मन भगवती अहिंसाको प्रणाम कर ॥
माँगी तूने छोड़ स्वार्थमय सारी ममता ।
दुखी जगत् के दुःख दूर करने की क्षमता ॥ ९ ॥

दिव्य नेत्र खुल गये दुःखका कारण जाना ।
जीने मरने का रहस्य तूने पहिचाना ॥
दुष्ट-नाश-संकल्प हृदय में तूने ठाना ।
तूने निश्चित किया सत्य-सन्देश सुनाना ॥ १० ॥

कर्मयोग संगीत सुनाया तूने ज्यों ही ।
सकल मानसिक रोग निकलकर भागे त्यो ही ॥
किंकर्तव्यविमूढ़ता न तब रहने पाई ।
अकर्मण्य भी कर्मपाठ सीखे सुखदाई ॥११॥

सर्व-धर्म-समभाव हृदयमें धरके तूने ।
सब धर्मो का सत्य समन्वय करके तूने ॥
मानव मनके अहंकारको हरके तूने ।
मनुष्यता का पाठ दिया जी भरके तूने ॥१२॥

यद्यपि जगको सदा सत्य-सन्देश सुनाया ।
पर दुष्टोंके लिये सुदर्शन चक्र चलाया ॥
दूतसूत ऋषि विविध रूप अपना बतलाया ।
जहाँ ज़रूरत पड़ी वहाँ तू दौड़ा आया ॥१३॥

तू छलियोंको छली, योगियोंको योगी था ।
था क्रूरोंको क्रूर, भोगियोंको भोगी था ।

निज निजके प्रतिबिम्ब तुल्य तू दिया दिखाई ॥
मानों दर्पन-प्रभा रूप तेरा घर आई ॥१४॥

मुरली की ध्वनि कहीं, कहीं पर चक्रसुदर्शन ।
कहीं पुष्पसा हृदय, कहीं पर पत्थरसा मन ॥
कहीं मुक्त संगीत, कहीं योद्धाका गर्जन ।
कहीं डाँडिया रास, कहीं दुष्टोंका तर्जन ॥१५॥

कहीं गोपियों संग प्रेमका शुद्ध प्रदर्शन ।
भाई बहिनों के समान लीलामय जीवन ॥
कहीं मल्लसे युद्ध कहीं बच्चोंसी बातें ।
बालक लीला कहीं, कहीं दुष्टों पर घातें ॥१६॥

कहीं राजके भोग कहीं पर सूखे चावल ।
कहीं स्वर्णप्रासाद कहीं विपदाओंका दल ॥
कहीं मेरु सा अचल कहीं बिजली सा चंचल ।
वस्त्र भिखारी कहीं, कहीं अबलाका अंचल ॥१७॥

कहीं सरलतम-हृदय कहीं पर कुटिल भयंकर ।
कहीं विष्णुसा शान्त कहीं प्रलयेश्वर शंकर ॥
कहीं कर्मयोगेश जगद्‌गुरु या तीर्थंकर ।
दुर्जनका यमराज सज्जनों का क्षेमंकर ॥१८॥

मानव-जीवन के अनेक रूपोंका स्वामी ।
सत्यदेव भगवती अहिंसाका अनुगामी ॥
तूने अगणित ज्ञान रत्न थे विश्वको दिये ।
मुझको बस तेरे अखंड पदचिह्न चाहिये ॥१९॥

माधव

मेरी कुटीमें आना माधव, आना मेरे द्वार।
सूरत तनिक दिखलाना माधव, आना मेरे द्वार।

मत देखो मेरा रोना,
देखो मत घरका कोना,
मैं दूँगा तुम्हें बिछौना,
तुम मेरे मनपर सोना,
फिर देना अपना प्यार।

मेरी कुटीमें आना माधव, आना मेरे द्वार ॥१॥

यह खाट पड़ी है टूटी,
विपदाने कुटिया लूटी,
तक़दीर हुई यों फूटी,
अपनों की संगति छूटी,
तुम हरना मेरा भार।

मेरी कुटीमें आना माधव, आना मेरे द्वार ॥२॥

मुरली की तान सुनाना,
गीता का गाना गाना,
यों कर्मयोग सिखलाना,
दुखियों को भूल न जाना।
तुम करना बेड़ा पार।

मेरी कुटी में आना माधव, आना मेरे द्वार ॥३॥

महावीरावतार

(१)

यद्यपि न किसी को ज्ञात रहा तू कब कैसे आजावेगा ।
अंधी आँखों के लिये सत्यका पदरज अञ्जन लावेगा ॥
अज्ञानतिमिरको दूर हटाकर नवप्रकाश फैलावेगा ।
रोते लोगों के अश्रु पोंछ गोदीमें उन्हें उठावेगा ॥

(२)

तो भी अपना अञ्चल पसार अवलाएँ ऊँची दृष्टि किये ।
करती थीं तेरा ही स्वागत अञ्चल में स्वागत-पुष्प लिये ॥
अधिकार छिने थे सब उनके उनको कोई न सहारा था ।
था ज्ञात न तेरा नाम मगर तू उनका नयन सितारा था ।

(३)

पशुओं के मुखसे दर्दनाक आवाज़ सदैव निकलती थी ।
उनकी आहोंसे जगत् व्याप्त था और हवा भी जलती थी ॥
भगवती अहिंसाके विद्रोही धर्मात्मा कहलाते थे ।
भगवान सत्यके परम उपासक पदपद ठोकर खाते थे ।

(४)

पशुओं का रोना सुनकर के पत्थर भी कुछ रो देता था ।
पर पढ़े लिखे क़ातिल मूर्खोंका वज्र हृदय रस लेता था ।
था उनका मन मरुभूमि जहाँ करुणारस का था नाम नहीं ॥
थे तो मनुष्य पर मनुष्यता से था उनको कुछ काम नहीं ॥

(५)

शूद्रोंको पूछे कौन जाति-मद में डूबे थे लोग जहाँ ।
वे प्राणी हैं कि नहीं इसमें भी होता था सन्देह वहाँ ॥
उनकी मजाल थी क्या कि कानमें ज्ञानमंत्र आने पावे ।
यदि आवे तो शीशा पिघलाकर कानोंमें डाला जावे ॥

(६)

था कर्मकांडका जाल बिछा पड़ गये लोग थे बंधन में ।
था आडम्बरका राज्य सत्यका पता न था कुछ जीवन में ॥
ले लिये गये थे प्राण धर्म के थी बस मुर्दे की अर्चा ।
सद्धर्म नामपर होती थी बस अत्याचारों की चर्चा ॥

(७)

पशु अबला निर्बल शूद्र मूकआहोंसे तुझे बुलाते थे ।
उनके जीवन के क्षण क्षण भी वत्सर सम बनते जाते थे ॥
तेरे स्वागत के लिये हृदय पिघलाकर अश्रु बनाते थे ।
आँखोंसे अश्रु चढ़ाते थे आँखें पथ बीच बिछाते थे ।

(८)

तूने जब दीन पुकार सुनी सर्वस्व छोड़ा दौड़ आया ।
रोगीने सच्चा वैद्य दीनने मानो चिन्तामणि पाया ॥

तू गर्ज उठा अत्याचारों को ललकारा, सब चौंक पड़े।
सब गूँज उठा ब्रह्मांड न रहने पाये हिंसाकांड खड़े॥

(९)

पशुओंका तू गोपाल बना पाया सबने निज मनभाया।
तूने फैलाया हाथ सभीपर हुई शान्त शीतल छाया॥
फहरादी तूने विजय वैजयन्ती भगवती अहिंसाकी।
हिंसाकी हिंसा हुई सहारा रहा नहीं उसको बाकी॥

(१०)

सारे दुर्बन्धन तोड़फोड़ दुष्कर्मकांड सब नष्ट किया।
भगवान सत्यके विद्रोहीगण को तूने पदभ्रष्ट किया॥
भगवती अहिंसाका झंडा अपने हाथों से फहराया।
तू उनका बेटा बना विश्व तब तेरे चरणों में आया॥

(११)

ढोंगी स्वार्थी तो 'धर्म गया, हा धर्म गया' यह चिल्लाने।
तेजस्वी रविके लिये कहे कुवचन धूर्तोंने मनमाने॥
लेकिन तूने पर्वाह न की ढोंगों का भंडाफोड़ किया।
सदसद्विवेक का मंत्र दिया भगवान सत्यका तंत्र दिया॥

(१२)

तू महावीर था बर्द्धमान था और सुधारक नेता था।
तू सर्वधर्मसमभाव विश्वमैत्रीका परम प्रणेता था।
भगवान सत्यका बेटा था आदर्श हमारे जीवन का।
तेरे पदचिह्न मिलें मुझको वरदान यही मेरे मनका॥

महात्मा महावीर

महात्मन्, छोड़ कर हमको कहाँ आसन जमाते हो ।
अहिंसा धर्मका डंका बजाने क्यों न आते हो ॥१॥
तुम्हारे तीर्थ की कैसी हुई है दुर्दशा देखो ।
बने हो कर्म-योगी फिर उपेक्षा क्यों दिखाते हो ॥२॥
परस्पर द्वंद होता है मचा है आज कोलाहल ।
न क्यों फिर आप समभावी मधुर वीणा बजाते हो ॥३॥
बने एकान्त के फल ये दिगम्बर और श्वेताम्बर ।
न क्यों अम्बर अनम्बर का समन्वय कर दिखाते हो ॥४॥
पुजारी रूढ़ियों के हैं न है निष्पक्षता इनमें ।
इन्हें स्याद्वाद की शैली न क्यों आकर सिखाते हो ॥५॥
हुआ है जाति-मद इनको भरा मत-मोह है इनमें ।
न क्यों अब मूढ़ता मद का वमन इनसे कराते हो ॥६॥
दुहाई ज्ञानकी देते बने पर अन्ध-विश्वासी ।
इन्हें विज्ञान की औषध न क्यों आकर पिलाते हो ॥७॥
अज़ब रोगी बने ये हैं गज़ब के वैद्य पर तुम हो ।
बने हैं आज ये मुर्दे न क्यों ज़िन्दे बनाते हो ॥८॥

वीर

पधारो मन-मन्दिर में वीर !

आओ आओ त्रिशला-नन्दन,
करते हैं हम तेरा बन्दन,
सुनलो यह दुनियाका क्रन्दन,
शीघ्र बँधाओ धीर ।
पधारो मन-मन्दिर में वीर ॥१॥

मानव है यह मानव-भक्षक,
है भाई भाई का तक्षक,
हों सब ही सब ही के रक्षक,
दो ऐसी तदवीर ।
पधारो मन-मन्दिर में वीर ॥२॥

टूट गये हैं हृदय, मिला दो,
स्याद्वादामृत, नाथ ! पिला दो,
मुर्दों का संसार जिला दो,
खुल जाये तक़दीर ।
पधारो मन-मन्दिर में वीर ॥३॥

सत्य-अहिंसा पाठ पढ़ा दो,
तपकी कुछ झाँकी दिखलादो,
बिगड़ों का संसार बना दो,
दूर करो दुख पीर ।
पधारो मन-मन्दिर में वीर ॥४॥

बुद्ध

दया-देवी के नव अवतार।

शाक्य-बन्धु पर जग का प्यारा,
भूले भटकों का ध्रुवतारा,
बुद्ध, अहिंसा सत्य दुलारा,
करुणा पारवार।
दयादेवी के नव अवतार ॥१॥

धन-वैभव का मोह छोड़कर,
आशाओं का पाश तोड़कर,
स्वार्थ-वासनाएँ मरोड़ कर,
किया जगत् से प्यार।
दयादेवी के नव अवतार ॥२॥

सुख दुख में सम रहने वाला,
पर-दुख निज-सम सहने वाला,
निर्भय हो सच कहने वाला,
सत्य--ज्ञान भंडार।
दयादेवी के नव अवतार ॥३॥

करुणा से भींगा मन लेकर,
दुखियों के दुख को तन देकर,
चकराती नैया को खे कर,
करना बेड़ा पार।
दयादेवी के नव अवतार ॥४॥

महात्मा बुद्ध

न तेरी करुणा का था पार ।
तू था सत्य-पुत्र तेरा था बन्धु अखिल संसार ।
न तेरी करुणा का था पार ।
निर्धन सधन और नर-नारी ।
मूढ़ विवेकी जनता सारी ।
पशु पक्षी भी मुदित किये तब औरों की क्या बात ।
किये झूठ हिंसा आदिक पापोंके घर उत्पात ॥
किया पापों का भंडाफोड़ ।
धर्म तब आया बन्धन तोड़ ।
मिटा दीन, दुर्बल, मनुजों के मुख का हाहाकार ।
न तेरी करुणा का था पार ॥१॥

न तेरी करुणा का था पार ।
करुणाशशि ऊगा आलोकित हुआ निखिलसंसार । न०
अबलाएँ अञ्चल पसार कर ।
बोल उठीं आओ करुणाधर ॥
नूतन आशाओं से सबका फूला हृदयोद्यान ।
रुग्ण जगत् ने पाया तुझको सच्चे वैद्य समान ॥
हुए आशान्वित सारे लोग ।
छूटने लगा अधार्मिक रोग ।
पृथ्वी उठी पुकार, पुत्र ! अब हरले मेरा भार ॥
न तेरी करुणा का था पार ॥२॥

न तेरी करुणा का था पार ।
पशु अबला निर्बल शूद्रों की तूने सुनी पुकार । न०
लाखों पशु मारे जाते थे ।
मुख में तृण रख चिल्लाते थे ।
कोई मानव का बच्चा था देता ज़रा न ध्यान ।
बढ़ती थी श्रोणित पी पीकर बस हिंसा की शान ॥
मिटाये तूने हिंसाकाण्ड ।
दयासे गूँज उठा ब्रह्मांड ।
क्रन्दन मिटा सुन पड़ी सबको वीणा की झङ्कार ।
न तेरी करुणा का था पार ॥३॥

न तेरी करुणा था पार ।
ढा दीं गईं सभी दीवालें रहे न कारागार । न तेरी०
जगमें बजा साम्यका डङ्का ।
मनकी निकल गई सब शङ्का ।
दम्भ और विद्वेष न ठहरे चढ़ा प्रेमका रङ्ग ।
बही दीनता बहा जातिमद ऐसी उठी तरङ्ग ॥
हुआ झूठों का मुँह काला ।
सत्य का हुआ बोलबाला ।
एक बार बज पड़े हृदय-वीणाके सारे तार ॥
न तेरी करुणा का था पार ॥४॥
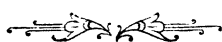
श्रमण बुद्ध

ओ बुद्ध श्रमण स्वामी तू सत्य ज्ञानवाला ।
तू सत्य का पुजारी सच्ची ज़बानवाला ॥१॥
हिंसा पिशाचिनी जब तांडव दिखा रही थी ।
तू मात अहिंसा का आया निशानवाला ॥२॥
विद्वान लड़ रहे थे उन्माद ज्ञानका था ।
बन्धुत्व प्रेम लाया तू प्रेम गानवाला ॥३॥
मुर्दा पड़ा जगत था सज्ज्ञान प्राण खोकर ।
तूने उसे बनाया गतिमान जानवाला ॥४॥
दुख से तपे जगत में थी शान्ति की न छाया ।
तू कल्पवृक्ष लाया सुखकर वितान वाला ॥५॥
विष पी रहा जगत था सब भान भूल करके ।
तूने अमृत पिलाया तू अमृत पानवाला ॥६॥
मद मोह आदि हिंसक पशु का बना शिकारी ।
तूने उन्हें गिराया तू था कमान वाला ॥७॥
'है धर्म दुःख ही में' अज्ञान यह हटाया ।
'अति' का विनाश कर्ता **तू मध्य यानवाला** ॥८॥
सब राजपाट छोड़ा जगके हितार्थ तूने ।
जीवन दिया जगतको तू प्राण-दानवाला ॥९॥
निःपक्षपात बन कर सन्मार्ग पा सके जग ।
दुर्ध्यान दूर करके हो सत्य ध्यानवाला ॥१०॥

महात्मा ईसा

अन्धश्रद्धाओं का था राज्य, ढोंग करते थे तांडव नृत्य ।
ईश-सेवकका रखकर वेष, बने शैतान राज्य के भृत्य ॥
मचाया था सब अन्धाधुंध, पाप करते थे परम प्रमोद ।
हुआ तब ही ईसा अवतार, मात मरियमकी चमकी गोद ॥१॥

प्रकम्पित हुआ दुष्ट शैतान, हुआ ढोंगोंका भंडाफोड़ ।
मनुज सब बनने लगे स्वतंत्र, रूढ़ियोंके दुर्बन्धन तोड़ ॥
जगत्का जागृत हुआ विवेक, सभीने पाया सच्चा ज्ञान ।
शुष्क पांडित्य हुआ बलहीन, शब्द-कीटोंने खोया मान ॥२॥

पुजारीकी पूजाएँ व्यर्थ, बनी थीं मृतकतुल्य निष्प्राण ।
व्यर्थ चिल्लाते थे सब लोग, चाहते थे चिल्लाकर त्राण ॥
मिटाया तूने यह सब शोर, शांतिका दिया सभीको ज्ञान ।
'प्रार्थना करो हृदय से बंधु, न ईश्वर के हैं बहरे कान ॥३॥

दुःखको समझ रहे थे धर्म, झेलते थे सब निष्फल कष्ट ।
वेषियों की थी इच्छा एक, किसी भी तरह अंग हो नष्ट ॥
व्यर्थ जाता था मनुज शरीर, न था पर-सेवासे कुछ काम ।
गंदगी फैली थी सब ओर, न था सदसद्विवेकका नाम ॥४॥

तोड़ कर ऐसे सारे ढोंग, सिखाया तूने सेवाधर्म ।
प्रेमसे कहा-'यही है बन्धु, अहिंसा सत्यधर्मका मर्म' ॥
रहा तू सारे झगड़े छोड़, रोगियोंकी सेवामें लीन ।
वेदनाओं से करके युद्ध, विश्वके लिये बना तू दीन ॥५॥

बना था तू अंधेकी आँख, और बहिरे लोगों का कान ।
निहत्थे लोगों का था हाथ, पंगुजनको था पाद-समान ॥
बालकों को था जननी-तुल्य, प्रेमकी मूर्ति अमित वात्सल्य ।
रोगियोंका था तू सद्वैद्य, दूर करदी थी सारी शल्य ॥६॥

दीन दुखियोंका करके ध्यान, न जाने कितना रोया रात ।
बिताये प्रहर एक पर एक, अश्रुवर्षा में किया प्रभात ॥
कटोरे सी जलसे परिपूर्ण, लिये अपनी आँखें सर्वत्र ।
दीन दुखियोंकी कुटियों बीच, सदा खोला सेवाका सत्र ॥७॥

हृदय तल करके वज्र-कठोर सही तूने दुष्टोंकी मार ।
मौतसे भिड़ा अभय हो वीर, क्रॉसका सहकर अत्याचार ॥
आपदाओं से खेला खेल, निकाली कभी न तूने आह ।
कही तो केवल इतनी बात, 'बन्धु! होते हो क्यों गुमराह' ॥८॥

पढ़ाकर मानवताका पाठ, बताई गुमराहोंको राह ।
नरकसे स्वर्ग जगत् बन जाय, यही थी तेरे मनमें चाह ॥
प्रेम, सेवा था तेरा मन्त्र, इसी के लिये दिये थे प्राण ।
हृदय में आकर मेरे देव, विश्वका फिर करदे कल्याण ॥९॥

ईसा

दिखा दे जन-सेवा की राह ।

दया चन्द्रिका को छिटकाकर,
दुखियों के दुख मन में लाकर,
दीनों की कुटियों में जाकर,

हरले जग का दाह ।
दिखादे जन-सेवाकी राह ॥ १ ॥

धर्मालय के ढोंग मिटाने,
हृदयों में पवित्रता लाने,
सत्य-धर्म का साज सजाने,

आजा मन के शाह ।
दिखादे जन-सेवा की राह ॥२॥

बन अंधी आँखों का अञ्जन,
दीन-दुखी जन का दुखभञ्जन,
कर दे तू उनका अनुरञ्जन,

रहे न मनमें आह ।
दिखादे जन-सेवाकी राह ॥३॥

सर्व-धर्म-समभाव सिखादे,
सत्य अहिंसा रूप दिखादे,
विश्वप्रेम सबके मन लादे,

रहे प्रेम की चाह ।
दिखादे जन-सेवाकी राह ॥४॥

महात्मा मुहम्मद

(१)

ओ वीरवर मुहम्मद, समता सिखानेवाले ।
सत्प्रेम की जगत को, झाँकी दिखानेवाले ॥

(२)

तेरे प्रयत्न से थे, पत्थर पसीज आये ।
मरुभूमि में सुधा की, सरिता बहानेवाले ॥

(३)

हैवानियत हटाकर, लाकर मनुष्यता को ।
बर्बर समाज को भी, सज्जन बनानेवाले ॥

(४)

होता मनुष्य-वध था, जब धर्म के बहाने ।
तब प्रेम अहिंसा का संगीत गानेवाले ॥

(५)

बनकर खुदा जगत का, शैतान पुज रहा था ।
शैतान के छलों का, पर्दा हटानेवाले ॥

(६)

जग साध्य-साधनों का, जब सद्विवेक भूला ।
रिश्ता तभी खुदा से, सीधा लगानेवाले ॥

(७)

जब व्याज बोझ बनकर, सबको सता रहा था ।
कहके हराम उसकी—हस्ती मिटानेवाले ॥

(८)

धन पाप किस तरह है, इस मर्मको समझकर ।
व्यवहार में घटा कर, जग को दिखानेवाले ॥

(९)

अबला ग़रीब जन की, जो दुर्दशा हुई थी ।
उसको हटा घटा कर, सुख शांति लानेवाले ॥

(१०)

जग में असंख्य अबतक, पैग़म्बरादि आये ।
उनको समान कह कर, समभाव लानेवाले ॥

(११)

मज़हब सभी भले हैं, यदि दिल भला हमारा ।
सब धर्म प्रेम-मय हैं, यह गीत गानेवाले ॥

(१२)

समभाव फिर सिखाजा, सूरत ज़रा दिखाजा ।
फिर एक बार आजा, दुनिया हिलानेवाले ॥

मुहम्मद

(१)

था अज़ब बना बाना तेरा, तलवार इधर थी, उधर दया ।
जल-लहरी की मालाएँ थीं, ज्वालाएँ थीं, था रूप नया ॥
दुर्जन-दल भञ्जक था पर तू, जगका अनुरञ्जक प्रेम-सना ।
भीतर से था सच्चा फ़कीर, ऊपर से था पर शाह बना ॥

(२)

था माल खज़ाना तेरा पर, कौड़ी कौड़ी का त्याग किया ।
मालिक था, गुरु था, पर तूने, सेवकता का सन्मान लिया ॥
विपदाओं के अगणित कंटक थे, तूने उनको पीस दिया ।
तू मौत हथेली पर लेकर, भूली दुनियाके लिये जिया ॥

(३)

नर-रत्न मुहम्मद, सीखी थी, तूने मरने की अज़ब कला ।
तू वाइज़ था, पैग़म्बर था, तूने दुनिया का किया भला ॥
अभिमान छुड़ाया था तूने, सबके मज़हब को भला कहा ।
तू सर्वधर्मसमभाव लिये, भगवान सत्यका दूत रहा ।॥

(४)

दिखलादे तू अपनी झाँकी, दुनिया में कुछ ईमान रहे ।
सत्प्रेम रहे मानव-मन में, भाईचारे का ध्यान रहे ॥
मज़हब के झगड़े दूर हटें, मज़हब में सच्ची जान रहे ।
सब प्रेम-पुजारी बनें अहिंसक, जिससे तेरी शान रहे ॥

मनुष्यता का गान

आओ मनुष्य बनजावें गावें मनुष्यता का गान ।
हम भूलें गोरा काला ।
जग हो न रंग-मतवाला ।
हम पियें प्रेम का प्याला ॥
हम देखें मनका रंग और मुखके ऊपर मुसकान ।
आओ मनुष्य बनजावें गावें मनुष्यता का गान ॥१॥
हम जाति पाँति सब तोड़ें ।
हम सब से नाता जोड़ें ।
हम मत-मदान्धता छोड़ें ॥
हों हिन्दू अथवा मुसलमान सबका हो एक निशान ।
आओ मनुष्य बनजावें गावें मनुष्यता का गान ॥२॥
हमने मानव तन पाया ।
पर मानवपन न दिखाया ।
औदार्य विवेक गमाया ।
हम मनुष्यता के बिना बने पंडित, कैसे नादान ।
आओ मनुष्य बनजावें गावें मनुष्यता का गान ॥३॥
हो सारा विश्व हमारा ।
सबसे हो भाईचारा ।
हो हृदय न न्यारा न्यारा ॥
हम चलें प्रेम के पंथ प्रेमका हो घर घर सन्मान ।
आओ मनुष्य बनजावें गावें मनुष्यता का गान ॥४॥

जागरण

सोनेवाले अब जाग जाग ।
उदयाचल पर आये दिनेश-अणु अणु पर छाया किरण-राग ॥
सोने वाले अब जाग जाग ॥१॥

निशि गई गया अब तमस्तोम,
फैला है भूतल पर प्रकाश ।
आंखों की उलझन हुई दूर,
हो रहा जगत का भ्रम-विनाश ॥
दिख रहा कुपथ पथ का विभाग ।
सोनेवाले अब जाग जाग ॥२॥

जग की जड़ता होगई नष्ट,
मचरहा यहां सब ओर शोर ।
है हुआ भोर भग रहे चोर,
कल कल करते कलकण्ठ मोर ॥
दिख रहे मनोहर विपिन बाग ।
सोनेवाले अब जाग जाग ॥३॥

अब खोल नयन करले विचार ,
कर्तव्य पंथ दिखता अपार ।
ढोना है तुझको अमित भार,
जब हैं दिनमें बस प्रहर चार ॥
जड़ता की शय्या त्याग त्याग ।
सोने वाले अब जाग जाग ॥४॥

नई दुनिया

दुनिया अब नई बनाना ।
यह जग हो गया पुराना ॥
फैला है इसमें रूढ़िजाल ।
दुर्जन रूपी हैं विकट व्याल ।
वंचक चलते हैं कुटिल चाल ।
सज्जन होते बेहाल हाल ॥
पर हमको स्वर्ग दिखाना । दुनिया अब० ॥१॥
रोका जाता इसमें विकास ।
है व्यक्ति पा रहा व्यर्थ त्रास ।
बनता कायरता का निवास ।
विद्वेष घृणा है आसपास ॥
हमको है प्रेम बढ़ाना । दुनिया अब० ॥२॥
यद्यपि है मानव एक जाति ।
पर घर घर में है जाति पाँति ।
भाई का भाई है अराति ।
जो था अघाति बन गया घाति ॥
सबको है हमें मिलाना ।दुनिया अब० ॥३॥
नारी है अब अधिकार-हीन ।
है पशु समान अतिहीन दीन ।
मानवता पशुता के अधीन ।

पशुबल में है सब न्याय लीन ॥
है यह अन्धेर मिटाना । दुनिया अब० ॥४॥

गोमुखव्याघ्रों की है कुटेक ।
पिसते समाजसेवी अनेक ।
है यहां अन्धश्रद्धातिरेक ।
कोसा जाता डटकर विवेक ॥
हमको विवेक फैलाना । दुनिया अब० ॥५॥

लड़ते आपस में सम्प्रदाय ।
हैं एक-प्राण पर भिन्न-काय ।
करते हैं भाई का अपाय ।
व्यय बढ़ा और घट रही आय ॥
समभाव हमें बतलाना । दुनिया अब० ॥६॥

मंदिर मसजिद गिरजे अनेक ।
मिलकर हो जायें एकमेक ।
छोड़ें अपनी अपनी कुटेक ।
जग जाये जनता का विवेक ॥
कोई भी हो न विराना । दुनिया अब० ॥७॥

सौभाग्य सूर्य हो उदित आज ।
दें हमें सत्य भगवान ताज ।
भगवती अहिंसा का स्वराज ॥
सुखमय स्वतन्त्र हो सब समाज ।
सबका हो एक ठिकाना । दुनिया अब० ॥८॥

मेरी कहानी

[१]

सुनता मेरी कौन कहानी ।
दीवाना कहती है मुझको यह दुनिया दीवानी ॥
सुनता मेरी कौन कहानी ॥

[२]

रस रस की बतियाँ न यहां हैं और न रूठी रानी ।
सूख गईं अखियाँ बह बह कर सूखा उनका पानी ।
सुनता मेरी कौन कहानी ॥

[३ [

है कर्तव्य कठोर बना है बालक मन भी ज्ञानी ।
दुनिया ऊँघे अथवा थूँके कर लूंगा मनमानी ॥
सुनता मेरी कौन कहानी ॥

[४]

किसे सुनाऊं गाल बजा कर दुनिया हुई पुरानी ।
नई बनेगी ऐसी दुनिया होगी परम सयानी ॥
सुनता मेरी कौन कहानी ॥

[५]

छोड़ चलूंगा झूठी दुनिया अपनी हो कि बिरानी ।
मैं ही श्रोता रहूं मगर अब सच कहने की ठानी ॥
सुनता मेरी कौन कहानी ॥

क़ब्र के फूल

क़ब्र पर आज चढ़ाये फूल ।
जबतक जीवन था तबतक क्षणभर न रहे अनकूल । क़ब्र पर ॥१॥
कणकणको तरसाया क्षणक्षण मिला न अणुभर प्यार ।
अब आँखोंसे बरसाते हो, मुक्ताओं की धार ॥
देह जब आज बनी है धूल ।
क़ब्र पर आज चढ़ाये फूल ॥२॥
आज धूल भी अंजन सी है, नयनों का शृङ्गार ।
काला ही काला दिखता था, तब हीरे का हार ॥
कल्पतरु भी था तब बंबूल ।
क़ब्र पर आज चढ़ाये फूल ॥३॥
विस्मृति के सागर में मेरी, डुबा रहे थे याद ।
नाम न लेते थे, कहते थे, हो न समय बर्बाद ॥
मगर अब गये भूलना भूल ।
क़ब्र पर आज चढ़ाये फूल ॥४॥
सदा तुम्हारे लिये किया था, धन-जीवन का त्याग ।
सींच सींच करके अँसुओंसे, हरा किया था बाग ॥
मगर तब हुए फूल भी शूल ।
क़ब्र पर आज चढ़ाये फूल ॥५॥
अब न क़ब्र में आ सकती है, इन फूलों की बास ।
मुझे शांति देता है केवल, यही क़ब्र का घास ॥
शान्त रहने दो जाओ भूल ।
क़ब्र पर आज चढ़ाये फूल ॥

भुलक्कड़

(१)

भुलक्कड़ ! फिर भूला तू आज ।
कुपथ और पथका न ठिकाना ।
शत्रु-मित्रका भेद न जाना ।
विषको अमृत, अमृत विष माना ॥
बन कर पागलराज ।
भुलक्कड़, फिर भूला तू आज ॥

(२)

परिवर्तन से डरता है तू ।
पर परिवर्तन करता है तू ।
चलता नहीं घिसड़ता है तू ॥
जब छिन जाता ताज़ ।
भुलक्कड़, फिर भूला तू आज ॥

(३)

अहङ्कार ने राज्य जमाया ।
और अन्ध-विश्वास समाया ॥
मिली चापलूसों की माया ॥
हुई कोढ़ में खाज ।
भुलक्कड़, फिर भूला तू आज ॥

(४)

तुझे सत्य सन्मान नहीं है ।
अथवा तुझमें जान नहीं है ।
तुझको इसका भान नहीं है—
　　　　गिरती सिर पर गाज ।
　　　　भुलक्कड़, फिर भूला तू आज ॥

(५)

कोरी कट कट से क्या होगा ?
धन के जमघट से क्या होगा ?
घूँघट के पट से क्या होगा ?
　　　　जब न हृदय में लाज ।
　　　　भुलक्कड़, फिर भूला तू आज ॥

(६)

फाँसी पर जिनको लटकाया ।
या निन्दा का पात्र बनाया ।
फिर उनके पूजन को आया ॥
　　　　ले पूजा के साज ।
　　　　भुलक्कड़, फिर भूला तू आज ॥

(७)

तुझे सत्य का रूप दिखाने ।
प्रेम और समभाव सिखाने ।
फिर जीवित समाज में लाने ॥
　　　　आया सत्य-समाज ।
　　　　भुलक्कड़, फिर भूला तू आज ॥

मिटनेका त्यौहार

(१)

मिटने का त्यौहार।
सखी, यह मिटने का त्यौहार।
मन देना है, तन देना है,
गिनगिनकर सब धन देना है,
वैभवमय जीवन देना है,
फिर देना है प्यार।
सखी, यह मिटने का त्यौहार॥

[२]

क्या लाये थे? क्या लेजाना?
सब दे जाना, शोक न लाना,
पिसने को मँहदी बन जाना,
लालीका भंडार।
सखी, यह मिटने का त्यौहार॥

[३]

मानव-तुल्य स्वतंत्र रहेंगे,
मौत भले हो, सत्य कहेंगे,
हँसते हँसते सदा सहेंगे,
गाली की बौछार।
सखी, यह मिटने का त्यौहार॥

[४]

मुख ऊपर मुसकान रहेगी,
और फ़कीरी शान रहेगी,
नग्न सत्य की आन रहेगी,
सेवामय संसार ।
सखी, यह मिटने का त्यौहार ॥

[५]

मिट्टीमें मिल जाना होगा,
अपना रूप मिटाना होगा,
मिटकर वृक्ष बनाना होगा,
होगा बेड़ा पार ।
सखी, यह मिटने का त्यौहार ॥

[६]

देना है जीवनका कणकण,
यदि करना हो मिटने का प्रण,
तो भेजा है आज निमन्त्रण,
कर लेना स्वीकार ।
सखी, यह मिटने का त्यौहार ॥
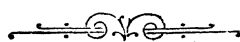
समाज सेवक

(१)

अपनी विपदा किसे सुनाऊँ ?
रोनेका अधिकार नहीं है, कैसे अश्रु बहाऊँ ?
अपनी विपदा किसे सुनाऊँ ॥

(२)

रुकी हुई वेदना हृदय में, आँखों से बहने को—
तरस रही है, तड़प रहा है; हृदय दुःख कहने को ।
पर मैं कहाँ सुनाने जाऊँ ?
अपनी विपदा किसे सुनाऊँ ॥

(३)

दिखलाता है क्षितिज किन्तु पथका न अन्त दिखलाता ।
चलना है, निशिदिन चलना है, है न क्षणिक भी साता ॥
कैसे अपना मन बहलाऊँ ?
अपनी विपदा किसे सुनाऊँ ॥

(४)

अपने तनसे अधिक सीस पर भारी बोझ लदा है ।
है न सहारा कोई उस पर विपदा पर विपदा है ॥
बोलो, कैसे पैर बढ़ाऊँ ?
अपनी विपदा किसे सुनाऊँ ॥

(५)

कंटकमय है मार्ग सब तरफ़, श्वापद हैं गुर्राते ।
जिनके लिये मर रहा हूँ मैं वे ही हैं ठुकराते ॥
मन में धैर्य कहाँ तक लाऊँ ?
अपनी विपदा किसे सुनाऊँ ॥

(६)

लुटादिया सर्वस्व, बना हूं जगके लिये भिखारी ।
अब तो लक्ष्मी को तलाक़ देने की आई बारी ॥
किसको अपनी दशा दिखाऊँ ?
अपनी विपदा किसे सुनाऊँ ॥

(७)

भीतर ज्वालाएँ जलती हैं, उनमें ही बसना है ।
छनकाना है अश्रु वहीं पर, फिर मुख पर हँसना है ॥
अपनी हँसी किसे समझाऊँ ?
अपनी विपदा किसे सुनाऊँ ॥

(८)

विपदाओ ! आओ ! आओ !! करलो अपने करने की ।
अब तो एक साधना ही है, हँस हँस कर मरने की ॥
मरकर विश्वरूप हो जाऊँ ।
अपनी विपदा किसे सुनाऊँ ॥

ठिकाना

ठिकाना पूछते हो क्या ! हमारा क्या ठिकाना है !
मिले जो झोंपड़ी आगे, निशा उसमें बिताना है ॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥१॥

अमीरीमें न था हँसना, ग़रीबी में न है रोना ।
जगत् चलता, चलेंगे हम, हमें क्या घर बसाना है ॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥२॥

पड़ा कर्तव्यका पथ है, भला विश्राम क्या होगा ?
न सोना है न रोना है, हमें चलकर दिखाना है ॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥३॥

विदाई स्वार्थ को दी फिर, हमारा क्या तुम्हारा क्या ?
ज़मीं औ आसमाँ सारा, सदन हमको बनाना है ॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥४॥

जिसे तुम घर समझते हो, वही तुमको मुबारिक़ हो ।
हमारा क्या, हमें जगसे सदा नाता लगाना है ॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥५॥

करोड़ों मर्द हैं भाई, करोड़ों नारियाँ बहिनें ।
फ़कीरी है मगर हमको, कुटुम्बी भी कहाना है ॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥६॥

भले हों अंग पर चिथड़े, लँगोटी भी न साजी हो ।
हमें तो शीलसे अपना, सदा जीवन सजाना है ॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥७॥

न कुछ भी संग लाये थे, चलेगा संगमें भी क्या।
पड़ा रह जायगा यों ही, न आना है न जाना है।
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥८॥

प्रलोभन क्या लुभावेगा ? करेगी चोट क्या विपदा ?
जगह वह छोड़ दी हमने, जहाँ उनका निशाना है॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥९॥

न साढ़े तीन हाथों से, अधिक कोई जगह पाता।
पसारें हाथ कितने ही, मगर क्या हाथ आना है ?
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥१०॥

करेंगे दीन की सेवा, बनेंगे विश्व-सेवक हम।
दुखीजनके कटे दिलपर, हमें मरहम लगाना है॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥११॥

करेंगी रूढ़ियाँ तांडव अहंकारी सतावेंगे।
मगर उनके प्रहारों को, हमें मिट्टी बनाना है॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥१२॥

बने जो मित्रजन क़ातिल, हमें पर्वा न है उनकी।
हमारी यह तमन्ना है, कि अपना सिर कटाना है॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥१३॥

न दुश्मन अब रहा कोई, हमारे दोस्त हैं सब ही।
सभी के प्रेममय मन पर, हमें कुटिया बनाना है॥
ठिकाना पूछते हो क्या० ॥१४॥
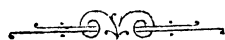
मँझधार

नौका पहुँची है मँझधार ।
हूँ खेवटिया, डाँड नहीं है, टूटी है पतवार ।
नौका पहुँची है मँझधार ॥१॥
इधर किनारा उधर किनारा, पर दोनों ही दूर ।
बीच बीचमें चट्टानें हैं, हो नौका चकचूर ॥
कैसे होगा बेड़ा पार ।
नौका पहुँची है मँझधार ॥२॥
मगर मच्छ चहुँओर भरे हैं, यदि हो थोड़ी भूल ।
उलट पुलट तब सब हो जावे रहे न चुटकी धूल ॥
उसपर दुनिया कहे गमार ।
नौका पहुँची है मँझधार ॥३॥
वैभव की कुछ चाह नहीं है और न यम से भीति ।
केवल भीख यही है मेरी रहे तुम्हारी प्रीति ॥
दुख में करूँ न हाहाकार ।
नौका पहुँची है मँझधार ॥ ॥४॥
डूब न जायें मेरे यात्री करना उनका त्राण ।
जलदेवी को बलि देदूँगा मैं अपने ही प्राण ॥
मेरे यात्री पहुँचें पार ।
नौका पहुँची है मँझधार ॥५॥

उसके प्रति

(१)

बुझादे, मेरी ज्वालाएँ ।
नागिनकी लपलपी जीभ-सी ज्वाला-मालाएँ ।
बुझादे, मेरी ज्वालाएँ ॥

(२)

दुनिया देख न सकती स्वामी ।
समझ रहा तू अंतर्यामी ।
अनल देव की किस प्रकार लिपटीं ये बालाएँ, ॥
बुझादे मेरी ज्वालाएँ ॥

(३)

अपनी व्यथा अवश्य सहूँगा ।
दुख में हँसता हुआ रहूँगा ।
जलकर भी आबाद करूँगा, तेरी शालाएँ ।
बुझादे, मेरी ज्वालाएँ ॥

झरना

(१)

बहादे छोटा सा झरना ॥
प्यासा होकर सोच रहा हूं कैसे क्या करना ?
बहादे छोटा सा झरना ॥

(२)

मरु-थल चारों ओर पड़ा है,
बालू का संसार खड़ा है।
बूँद बूँद की दुर्लभता में, कैसे रस भरना ?
बहादे, छोटा सा झरना ॥

(३)

नयन-नीर बरसाना होगा,
मानस को भर जाना होगा,
शीतल मंद सुगंध पवन से जगत्ताप हरना,
बहादे, छोटासा झरना ॥

(४)

मेरी थोड़ी प्यास बुझादे,
छोटासा ही झरना लादे।
चमन बना दूंगा इस मरु को भले पड़े मरना,
बहादे छोटासा झरना ॥

प्यास

(१)

तूही मेरी प्यास बुझादे ।
अधिक नहीं तो एक बूँद ही इस मुख में टपकादे ।
तूही मेरी प्यास बुझादे ।

(२)

भूतल में जल है पर मेरे काम नहीं वह आता ।
गली गली का मैल वहां है मुख न उसे छूपाता ॥
मुखपर निर्मल जल बरसादे ।
तूही मेरी प्यास बुझादे ॥

(३)

"पानी में भी मीन पियासी सुनकर आवे हाँसी"
पर तू मर्म समझता स्वामी, तू घट घट का वासी ॥
आकर निर्मल नीर पिलादे ।
तू ही मेरी प्यास बुझादे ॥

(४)

चातक तुल्य रहूँगा प्यासा जान भले ही जावे,
पर न अशुद्ध नीरका कण भी इस मुखमें आपावे ॥
मेरा यह प्रण पूर्ण करादे ।
तू ही मेरी प्यास बुझादे ॥
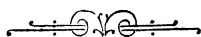
आशा का तार

अमर रह रे आशाके तार।
तू टूटा तो दुनिया टूटी डूबा जग मँझधार ॥
अमर रह रे आशाके तार ॥ १ ॥

अटके रहते हैं तेरे में सारे जगके प्राण।
घोर विपत में भी करता है तू ही सब का त्राण ॥
न होने देता जीवन भार।
अमर रह रे आशाके तार ॥२॥

निर्धन सधन महात्मा योगी सबको तेरी चाह।
तमस्तोममें भी दिखलाता रहता है तू राह ॥
साधनों का है तू ही सार।
अमर रह रे आशाके तार ॥ ३ ॥

धन भी जावे जन भी जावे बन जाऊं असहाय।
तू न टूटना, भले सभी कुछ टूटे जग बह जाय ॥
निराशा है जीवन की हार।
अमर रह रे आशाके तार ॥ ४ ॥

विपत विरोध उपेक्षा मिलकर करना चाहें चूर।
तबतक क्या कर सकते जब तक तू है जीवनमूर ॥
विजय का तू अनुपम आधार।
अमर रह रे आशाके तार ॥ ५ ॥

क्या करूं ?

अगर सफलता पा न सकूं तो, दुनिया कहती है नादान,
विजयी बनूं सफलता पाऊं, तो कहती है धूर्त महान ॥ १ ॥
निंदक भ्रष्ट विरोधी जनको, क्षमा करूं कहतीं कमज़ोर'
इनको अगर ठिकाने लाऊं, तो कहती 'निष्करुण कठोर' ॥२॥
अगर कष्ट कुछ सहन करूं तो, कहती है 'फैलाता नाम'
बचा रहूं यदि व्यर्थ कष्टसे, कहती है 'करता आराम' ॥३॥
दान करूं तो कहने लगती, 'था कैसा यह संग्रह-शील,
मुँह देखी बातें करता था, करता था सत्पथमें ढील ॥४॥
दान न करूं बोलती दुनिया, देता है झूठा उपदेश,
त्याग सिखाता दुनिया भरको, अपने में न त्यागका लेश' ॥५॥
अगर फ़कीर बनूं तो कहती, 'पेट—पूर्त्ति का खोला द्वार,
दुनिया से धक्के खाकर अब, बन बैठा सेवक लाचार' ॥६॥
अगर रहूं धन से स्वतन्त्र मैं, कहती है 'भरकर निज पेट,
त्याग त्याग चिल्लाता रहता, करता भोलों का आखेट' ॥७॥
अगर प्रेम से बात करूं तो, कहती 'कैसा मायाचार'।
अगर उपेक्षा करूं जगत से, तो कहती 'मदका अवतार'॥८॥
अगर युक्तियों से समझाऊं, कहती 'युक्ति तर्क है व्यर्थ,
सत्य प्राप्त करने में कैसे, हो सकती है युक्ति समर्थ' ॥९॥

अगर भावना ही बतलाऊं, कहती 'कैसा खुदमुख्तार।
बिना युक्ति के पागल जैसे, सुन सकता है कौन विचार' ॥१०॥
यदि सबका मैं करूं समन्वय, कहती है 'कैसा बकवाद।
एक बात का नहीं ठिकाना; देता है खिचड़ी का स्वाद'॥११॥
एक बात दृढ़ता से बोलूं, कहती 'ढीठ और मुँहजोर,
सुनता है न किसी की बातें, मचा रहा अपना ही शोर' ॥१२॥
सोचा बहुत करूं क्या जिससे, हो इस दुनिया को संतोष,
सेवा यह स्वीकार करे या नहीं करे पर करे न रोष ॥१३॥
सोचा बहुत नहीं पाया पथ, समझा यह सब है बेकार,
दुनिया को खुश करने का है यत्न मूर्खता का आगार ॥१४॥
अरे जन्तु, खुदको प्रसन्न कर, जिससे हो प्रसन्न सत्येश।
बकती है दुनिया बकने दे, ढककर रख तू कान हमेश ॥१५॥
सज्जन-दुर्जन-मय दुनिया में, होंगे कुछ सज्जन धीमान।
आज नहीं तो कल समझेंगे, तेरा ध्येय और ईमान ॥१६॥
अपरिमेय संसार पड़ा है, अपरिमेय आवेगा काल।
उसमें कहीं मिलेगा कोई, जो समझेगा तेरा हाल ॥१७॥
चिंता की कुछ बात नहीं है कर्मयोग से करले कर्म।
दुनिया खुश हो या नाखुश हो, होगा तेरा पूरा धर्म ॥१८॥
सच्चा यश रहता है मनमें, दुनिया की तब क्या पर्वाह।
दुनियाका यश छाया सम है, देख नहीं तू उसकी राह ॥१९॥
सत्य अहिंसाके चरणों में, करदे तू अपना उत्सर्ग,
तब तेरी मुट्ठी में होगा, सारा सुयश स्वर्ग अपवर्ग ॥२०॥

मेरी चाल

[१]

कौन रोकेगा मेरी चाल ।
गर्दन कटे चलेगा धड़ भी, चमक उठेगा काल ॥
कौन रोकेगा मेरी चाल ॥

[२]

विपदाएँ आवेंगी पथ में, होंगीं चकनाचूर ।
तन लेंगी पर मनको होगा, छूसकना भी दूर ॥
करूंगा उन्हें हाल बेहाल ।
कौन रोकेगा मेरी चाल ॥

[३]

अगर प्रलोभन भी आवेंगे, दूंगा मैं दुतकार ।
कर दूंगा मैं एक एक पर, शत-शत पाद-प्रहार ॥
तोड़ दूंगा मैं उनका जाल ।
कौन रोकेगा मेरी चाल ॥

[४]

अगर अंध-श्रद्धा आवेगी, दूंगा दंड प्रचण्ड ।
कर दूंगा मैं तोड़ फोड़ कर, खंड खंड पाखंड ॥
बनेगा सद्विवेक ही ढाल ।
कौन रोकेगा मेरी चाल ॥

[५]

अभ्रंकश गिरि-शृंग और पथ का बीहड़ बन घोर ।
मुझको डरा नहीं सकता, मैं निर्भय चारों ओर ॥
खिलाऊंगा मैं हँसकर व्याल ।
कौन रोकेगा मेरी चाल ॥

[६]

शत्रु, मित्र का रूप बनाकर अगर करें आघात ।
सहलूंगा निश्चिन्त करूंगा हँसकर उनसे बात ॥
विरोधी भले बजावें गाल ।
कौन रोकेगा मेरी चाल ॥

[७]

सत्येश्वर भगवती अहिंसा हैं मेरे आधार ।
उनके वरद हस्त के नीचे मेरा बेड़ा पार ॥
सम्हालेंगे वे अपना बाल ।
कौन रोकेगा मेरी चाल ॥

[८]

मुझ निर्बल के बल हैं वे ही वे ही पितर महान ।
मुझ ग़रीब के धन हैं वे ही भक्तों के भगवान ॥
तोड़ देंगे वे ही जंजाल ।
कौन रोकेगा मेरी चाल ॥

उलहना

कोमल मन देना ही था तो,
क्यों इतना चैतन्य दिया।
शिशु पर भूषण-भार लादकर,
क्यों यह निर्दय प्यार किया ॥ १ ॥

यदि देते जड़ता, जगके दुख
हानि नहीं कुछ कर पाते।
त्रिविध-ताप से पीड़ित करके,
मेरी शान्ति न हर पाते ॥ २ ॥

जड़ता में क्या शान्ति न होती,
अच्छा था जड़ता पाता।
किसका लेना किसका देना,
वीतराग सा बन जाता ॥ ३ ॥

अपयश का भय कर्तव्यों की—
रहती फिर कुछ चाह नहीं।
तुम सुख देते या दुख देते,
होती कुछ पर्वाह नहीं ॥ ४ ॥

लड़ते लोग धर्म के मद से,
मेरा क्या आता जाता ।
दुखियों की आहों से भी यह,
हृदय नहीं जलने पाता ॥ ५ ॥
विधवाओं के अश्रु न मेरी,
नज़रों में आने पाते ।
नहीं आँसुओं की धारा से,
ये कपोल धोये जाते ॥ ६ ॥
हाय हाय चिल्लाता जग पर,
होते कान न भारी ये ।
नहीं सुखाती नहीं जलाती,
चिन्ता की चिनगारी ये ॥ ७ ॥
जड़ होकर जड़ के पूजन में,
निजपर सब भूला रहता ।
दुनिया के दुख की चिन्ता का—
बोझ हृदय पर क्यों सहता ॥ ८ ॥
पर जो हुआ हो गया, अब क्या ?
अब तो इतना ही कर दो ।
मन को वज्र बना दो उस में,
साहस और धैर्य भर दो ॥ ९ ॥
'रोना' तो मैं सीख चुका हूँ ।
अब कुछ 'करना' सिखला दो ॥
इस कर्तव्य यज्ञ में बढ़कर—
हँस हँस मरना सिखला दो ॥ १० ॥

विधवा के आँसू

अब इन अँसुओं का क्या मोल ?
बेशर्मी से भिंगा रहे हैं ये निर्लज्ज कपोल ।
अब इन अँसुओं का क्या मोल ॥ १ ॥
उस दिन थे मोती से जब था सोने का संसार ।
इन पर न्यौछावर होता था कभी किसीका प्यार ॥
झड़ते थे फूलों से बोल ।
अब इन अँसुओं का क्या मोल ॥ २ ॥
गंगा यमुना सी बहती है इन आँखों से धार ।
प्रेम-पुजारी गया, यहाँ जो लेता गोता मार ॥
अब खारे जल की कल्लोल ।
अब इन अँसुओं का क्या मोल ॥ ३ ॥
आपाते थे कभी न नीचे जो अंचल की ओर ।
आज भिंगाते है वे भूतल, बन वर्षा घनघोर ॥
वन वन गली गली में डोल ।
अब इन अँसुओं का क्या मोल ॥ ४ ॥
सारा जग अंधा बन बैठा मानो आँखें फोड़ ।
देख न सकता बहा रही क्या हृदय निचोड़ निचोड़ ॥
निर्दय ! अब तो आँखें खोल ।
अब इन अँसुओं का क्या मोल ॥ ५ ॥

कोई मुझे अभागिन कहता, कहता कोई राँड़ ।
सास ननँद कहने लगतीं हैं, 'बन बैठी है साँड़ ॥
निशि दिन सुनती बोल कुबोल ।
अब इन अँसुओं का क्या मोल ॥ ६ ॥

अब न शीलकी भी इज्जत है आया गुंडा-राज ।
घर घर में है चर्चा मेरी गली गली आवाज ॥
बजता है निंदा का ढोल ।
अब इन अँसुओं का क्या मोल ॥ ७ ॥

कोने में बैठी रहती हूँ सब की सीखें सीख ।
रूखा टुकड़ा मिल जाता ज्यों मिली कहीं से भीख ॥
जब सब करते मौज किलोल ।
अब इन अंसुओं का क्या मोल ॥ ८ ॥

धधक रही है भीतर भट्टी ऊपर अश्रु--प्रवाह ।
अरमानों को जला जलाकर बना रही हूँ 'आह'
देखो भीतर के पट खोल ।
अब इन अँसुओं का क्या मोल ॥ ९ ॥

मुर्दे जलकर धूल कहाते पर मैं जीवित धूल ।
सबके निकट मौत रहती पर मुझे गई वह भूल ॥
आजा तू ही मुझ से बोल ।
अब इन अँसुओं का क्या मोल ॥ १०॥

चिता

ज्वालाओं का जाल बिछा है, है पर शान्ति-निकेतन।
जलतीं हैं चिताएँ सारीं, शान्त यहां है तन मन ॥१॥
अब न मित्र का मोह यहां है, है न शत्रु का भी भय।
हूं न किसीपर सदय-हृदय अब हूं न किसीपर निर्दय ॥२॥
जीवन में क्षणभर भी ऐसी नींद नहीं ले पाया।
सोता था मैं नचता था मन, माया में भरमाया ॥३॥
'इसका लेना उसका देना, यह मेरा वह तेरा'।
करता था, पर रहा न कुछ अब, लगा चिता पर डेरा ॥४॥
फूलों की शय्या पर सोया धन जोड़ा दिल तोड़ा।
भूला रहा काठकी शय्या, चार जनों का घोड़ा ॥५॥
इसे हराया उसे हराया बना रहा अभिमानी।
पर यह जीवन हार रहा था, सीधी बात न जानी ॥६॥
इसका लूटा उसका खाया, अति लालचके मारे।
लेकिन हाथ न कुछ भी आया, जाता हाथ पसारे ॥७॥
मानव का कर्तव्य भुलाया योंही दिवस बिताये।
बहती थी गंगा पर मैंने हाथ नहीं धोपाये ॥८॥
खेला भद्दा खेल, खेल का मज़ा न कुछ भी आया।
सूत्रधार यमराज अचानक आया खेल मिटाया ॥ ९ ॥
चला, साथ पर चला न कुछ भी, साथ न था कुछ लाया।
उस मिट्टीमें ही जाता हूं, जिस मिट्टी से आया ॥ १० ॥

माया

जगकी कैसी है यह माया ।
जिसने जीवन भर भरमाया ॥

(१)

निशिदिन जाप जपा ईश्वरका पर न हृदय में आया ।
धोखा देने चला उसे पर मैंने धोखा खाया ॥
जगकी कैसी है यह माया ॥

(२)

था जीवनका खेल मगर मैं खेल न दिखला पाया ।
खेल खेलने गया मगर मैं रो रो कर भग आया ।
जगकी कैसी है यह माया ॥

(३)

सदा हृदय में गूंजा 'मैं मैं' 'मैं मैं' काम न आया ।
माया ओझल हुई मिटा सब अपना और पराया ॥
जगकी कैसी है यह माया ॥

(४)

मुट्ठीमें लेने को दौड़ा दिखती थी जो छाया ।
पर वह छाया हाथ न आई मूरख ही कहलाया ॥
जगकी कैसी है यह माया ॥

(५)

माया को सत्येश्वर समझा सत्येश्वर को माया ।
इसीलिये कुछ हाथ न आया जीवन व्यर्थ गमाया ॥
जगकी कैसी है यह माया ॥

जीवन

जीवन का कौन ठिकाना ।

जो अपना कर्तव्य उसी पर, न्यौछावर होजाना ।

जीवनका कौन ठिकाना ॥ १ ॥

बनो आलसी तो जाना है, कर्म करो तो जाना ।

फिर क्यों स्वार्थी और आलसी बनकर मृतक कहाना ।

जीवनका कौन ठिकाना ॥ २ ॥

यौवन पाया धन जन पाया, सभी वृथा है पाना ।

अगर नहीं दुनियाके हितमें, अपना हित पहचाना ॥

जीवनका कौन ठिकाना ॥ ३ ॥

क्या लाये थे क्या लेजाना, खाली आना जाना ।

यहीं रहा सब यहीं रहेगा, क्यों फिर मोह लगाना ॥

जीवनका कौन ठिकाना ॥ ४ ॥

आवेगा जब काल तभी यह, सब कुछ है छिनजाना ।

क्यों न जगत के सेवक बनकर, त्यागवीर कहलाना ॥

जीवन का कौन ठिकाना ॥ ५ ॥

अभिमानी बन गजपर बैठो, सीखो जोर जताना ।

याद रहे पर एक दिवस है, मिट्टी में मिलजाना ॥

जीवनका कौन ठिकाना ॥ ६ ॥

खेलो खेल खिलाड़ी बनकर छोड़ो वैर भजाना ।

अपना अपना खेल खेलकर हँसकर छोड़ो बाना ॥

जीवनका कौन ठिकाना ॥ ७ ॥

दुविधा का अंत

पथमें कंटक बिछे, पड़ी है गहरी खाई।
खो बैठा सर्वस्व बची एक भी न पाई ॥
विपदाओं की घटा उमड़ती ही आती है।
बिजली भी यह कड़क कड़क मन धड़काती है ॥
अन्धकार घनघोर है हुआ एक सा रात दिन।
पीछे भी पथ है नहीं आगे बढ़ना है कठिन ॥१॥

कैसे आगे बढ़ूं यहीं क्या पड़ा रहूं मैं।
पड़ा पड़ा सड़ मरूं कीच में गड़ा रहूं मैं ॥
हृदय हुआ है खिन्न भरी उसमें दुविधा है।
चारों ओर विपत्ति नहीं कोई सुविधा है ॥
मरना है जब हर तरह क्यों न क़दम आगे धरूं।
पड़ा पड़ा या पिछड़ कर कायर बनकर क्यों मरूं।

चाह

हरगिज़ दिलमें यह चाह नहीं मुझपर न मुसीबत आने दो।
मैं चलूँ जहाँ पर वहीं उन्हें विघ्नोंका जाल बिछाने दो ॥
यदि डरवाते भयभूत खड़े पर्वाह नहीं डरवाने दो।
पथमें यदि कंटक बिछे हुए पदमें गड़ते गड़जाने दो ॥
बस, मुझे चाहिये ऐसा दिल जिसमें कायरता लेश न हो।
समभाव धैर्य साहस के बलपर विपदासे भी क्लेश न हो ॥
यदि ऐसा दिल मिलगया मुझे तो पथकंटक पिस जायेंगे।
विपदा के भयके भूतोंके विघ्नोंके दिल घबरायेंगे ॥

श्रृंगार

करूँगी सखि, मैं अपना श्रृंगार ॥
सोना न होगा, न चाँदी भी होगी,
होगा न हीरे का हार ॥
करूँगी सखि मैं अपना श्रृंगार ॥१॥
काजल न होगा, न ताम्बूल होगा,
होगा न रेशम का भार ।
महँदी न होगी, न उबटन भी होगा,
होगी न गोटा-किनार ॥
करूंगी सखि, मैं अपना श्रृंगार ॥२॥
होगा न कङ्कण, न होगी अँगूठी,
होंगे न मोती अपार ।
चम्पा न होगा, चमेली न होगी,
होगी न बेला-बहार ॥
करूँगी सखि, मैं अपना श्रृंगार ॥३॥
खञ्जनसी आँखों में, अंजन लगानेको,
जाऊँगी मरघट के द्वार ।
ढूँढूंगी श्रृंगार-साधन वहाँ पै मैं,
होगे जो दुनिया के सार ॥
करूँगी सखि, मैं अपना श्रृंगार ॥४॥

जनता का सेवक जला होगा कोई,
लेकर वहाँ की मैं छार ।
सिर पै चढ़ाऊँगी, आँखोंमें आँजूँगी,
पाऊँगी शोभा अपार ।
करूँगी सखि, मैं अपना शृंगार ॥५॥

गूँथूँगी उस ही चितामें से लेकर के,
हीरे से फूलों का हार ।
उन ही से कङ्कण अँगूठी बनाऊँगी,
लूँगी मैं गहने सम्हार ॥
करूँगी सखि, मैं अपना शृंगार ॥६॥

जिस पंथसे लोक-सेवी महायोगी,
होकर हुआ होगा पार ।
उस पंथ की धूलि का चूर्ण करके मैं,
लूँगी कपोलों पै धार ॥
करूंगी सखि, मैं अपना शृंगार ॥७॥

होगी जो योगीकी कोई वियोगिनी,
आँसू रही होगी ढार ।
उसही के आँसूके मोती बनानेको,
लूँगी मैं आँसू उधार ॥
करूँगी सखि, मैं अपना शृंगार ॥८॥

ऐसी सजीली रँगीली बनूंगी मैं,
जाऊँगी सैयाँ के द्वार ॥
उनको रिझाऊंगी, अपना बनाऊंगी,
दूंगी मैं प्रेमोपहार ॥
करूँगी सखि, मैं अपना शृंगार ॥९॥

वियोग

कब तक देखूँ बाट बतादो कैसे तुम्हें बुलाऊँ ।
यदि मैं आऊँ पास तुम्हारे तो किस पथसे आऊँ ॥
कब तक तुमसे दूर बतादो होगा मुझको रहना ।
निर्बल कंधों पर अनन्त कष्टों का बोझा सहना ॥ १ ॥

भरा हुआ यह हृदय तुम्हारे बिना बना है सूना ।
जब जब याद तुम्हारी आती होता है दुख दूना ॥
रूखा सूखा अंग हुआ है फीका पड़ा वदन है ।
कूड़ा कर्कट भरा हुआ है गँदला हुआ सदन है ॥ २ ॥

तुम ही हो सौन्दर्य जगत के अबलों के अवलम्बन ।
मन-मन्दिर के देव तुम्हीं हो दुखियाके जीवनधन ॥
जीवन-रजनी के शशि तुम हो तुम बिन जीवन फीका ।
तुम बिन काल कटेगा कैसे इस लम्बी रजनीका ॥ ३ ॥

तुम घटके अन्तर्यामी हो ज्ञात तुम्हें सब बातें ।
किस प्रकार दुःखों से कटती हैं दुखिया की रातें ॥
फिर भी मुझको नहीं बताते कैसे तुमको पाऊँ ।
इस अनन्त दुखमय दोज़ख को कैसे स्वर्ग बनाऊँ ॥ ४ ॥

दिखती मुझको मूर्ति तुम्हारी है कोने कोने में ।
फिर भी हाथ न आते क्या फल है छलिया होनेमें ।
सुनते और देखते हो सब फिर मैं क्या क्या रोऊँ ।
सिसक सिसककर इन अँसुओंसे कबतक आँखें धोऊँ ॥ ५ ॥

देव, तुम्हारे बिना आज सर्वस्व लुटा है मेरा ।
बुद्धि हुई दुर्बुद्धि हृदय में है अशान्तिका डेरा ॥
धन, तन, बल, उपभोग भोग सब शान्त नहीं करपाते ।
किन्तु बढ़ाते है अशान्ति ये मनका ताप बढ़ाते ॥ ६ ॥
ये सब प्राणवान होंगे तब जब मैं तुम को पाऊँ ।
बिगड़ी सभी बनेगी यदि मैं दर्शन भी पाजाऊँ ॥
सब कुछ ले लो किन्तु हृदय के ईश्वर मेरे आओ ।
अथवा बन्धन-मुक्त बनाकर अपना पथ दिखलाओ ॥ ७ ॥

उपहार

जबसे दीपक जला तभीसे होने लगा अंग शृङ्गार ।
नव आशाओंमें भर करके भूलगई सारा संसार ॥
लगी रही टकटकी द्वार पर आँखों को न मिला अवकाश ।
प्रियतम तो तब भी न दिखाये मन ही मन होगई निराश ॥
मुरझा गये हाथ के गजरे सूख गया फूलोंका हार ।
मैंने भी तब तो झुँझलाकर मिटा दिया सारा शृङ्गार ॥
बोली, व्यर्थ बनाया मैंने बाहर का बनावटी वेश ।
क्या न हृदयकी सुन्दरतासे रीझेंगे प्यारे प्राणेश ॥
जब कि यही गुनगुना रही थी तब प्रियतम आये चुपचाप ।
खड़े खड़े आतुर नयनों से देखा बिखरा केश-कलाप ॥
हुआ सम्मिलन, हँसकर बोले-"क्या दोगी मुझको उपहार"
दृग से आँसू निकल पड़े मैं बोली-लो मोती का हार ॥

प्यालेवाले

[१]

दया कर ए प्यालेवाले,
करके मस्त मुसाफ़िर लूटा पिला पिला प्याले ।
दया कर ए प्यालेवाले ॥

[२]

निर्दय, यह संहार किया क्यों ।
मुग्ध पथिक को मार दिया क्यों ॥
घूँट घूँट पर घूँट पिलाये मारे ज्यों भाले ।
दया कर ए प्यालेवाले ॥

[३]

मिला तुझे थोड़ासा भाड़ा ।
पर उसका संसार बिगाड़ा ॥
उसे पडेंगे अब पद पद पर टुकड़ोंके लाले ।
दया कर ए प्याले वाले ॥

(४)

दुनिया को अपना श्रम देकर ।
जाता था आशाएँ लेकर ॥
घर की आशा में भूला था पैरों के छाले ।
दया कर ए प्यालेवाले ॥

(५)

तूने उस पर नशा चढ़ा कर ।
बेचारे को दीन बनाकर ॥
उसके सभी इरादे तूने आज तोड़ डाले ।
दया कर ए प्यालेवाले ॥

[६ [

आखिर है यह कितना जीवन ।
इसके लिये पाप में क्यों मन ।
बन्धु बन्धु हैं सभी प्रेम से प्रेम–गीत गाले ॥
दया कर ए प्यालेवाले ॥

[७]

इतनी तृष्णा बढ़ी भला क्यों ।
मूरख, करने पाप चला क्यों ।
खाना है दो कौर प्रेमसे आकर तू खाले ॥
दया कर ए प्यालेवाले ॥

(८)

छोड़ छोड़ यह नशा चढ़ाना ।
मानव का अज्ञान बढ़ाना ।
इतना पाप बोझ करता क्यों जो न टले टाले ।
दया कर ए प्यालेवाले ॥

मनुष्यता

पाई मनुष्यता है कर्तव्य नित्य करना ।
जीवन सफल बनाने जग की विपत्ति हरना ॥ १ ॥

आलस्य मत दिखाना,
स्वार्थान्धता भगाना,
सत्प्रेम--पंथ जाना,
सर्वत्र प्रेम भरना । पाई. ॥ २ ॥

अन्याय हो न पावे,
निर्बल न मार खावे,
अबला न दुख उठावे,
नय पंथ में विचरना ॥ पाई ॥ ३ ॥

स्वाधीनता जगाना,
यह दासता हटाना,
गर्दन भले कटाना,
आपत्ति से न डरना ॥ पाई. ॥ ४ ॥

लो फूट से बिदाई,
हैं सब मनुष्य भाई,
इनमें न है जुदाई,
मनमें न मान धरना ॥ पाई ॥ ५ ॥

मत का घमंड छोड़ो,
यह जाति-भेद तोड़ो,
मुँह प्रेम से न मोड़ो,
यदि दुःख-सिन्धु तरना ॥ पाई. ॥ ६ ॥

दुर्बुद्धि है सताती,
श्रद्धान्ध है बनाती,
बनना न पक्षपाती,
समभाव प्रेम करना ॥ पाई ॥ ७ ॥

बन कर्मयोग–धारी,
कर्मण्यता–प्रचारी,
संसार–दुःखहारी,
रोते हुए न मरना ॥
पाई मनुष्यता है कर्तव्य नित्य करना ॥ ८ ॥

उद्धारकात्मा से

तुम कहते थे हम आवेंगे पर भूलगये क्यों अपनी बात ।
क्या विश्वनियम तुमने भी पकड़ा दीनोंपर करते आघात ॥
हम दीन हुए, जग हँसता है, पर तुम क्यों बन बैठे नादान ?
या किसी तरह से रिसागये हो मनमें रक्खा है अभिमान ॥
अथवा पिछले पापोंका अबतक हुआ नहीं पूरा परिशोध ।
या किया हमारी वर्तमान करतूतोंने ही पथका रोध ।
तुम जिस बन्धन में पड़े हुए हो तोड़ो उस बन्धनका जाल ।
मत ढील करो; क्या नहीं जानते हम दीनोंके हाल हवाल ॥

मतवारे

समझजा स्वार्थी मतवारे ।
पाकर बुद्धि अन्ध-श्रद्धा से मरता क्यों प्यारे ॥
समझजा स्वार्थी मतवारे ॥ १ ॥

अहंकार का लगा दवानल तू है और लगाता ।
क्यों ईंधन देता है भूलों को है और भुलाता ॥
फिराता क्यों मारे मारे ।
समझजा स्वार्थी मतवारे ॥ २ ॥

छाई है नव-घटा मोर नचेते हैं वनके अंदर ।
प्लावित होगी तपे तवासी भूमि और गिरि कन्दर ॥
मिलेंगे सब न्यारे न्यारे ।
समझजा स्वार्थी मतवारे । ॥ ३ ॥

झरता है आकाश बता तू कहां 'थेगरा' देगा ।
रसकी बूँदें टपक रहीं हैं कह तू क्या कर लेगा ॥
पियेंगे प्यासे दुखियारे ।
समझजा स्वार्थी मतवारे ॥ ४ ॥

ज्वालाएँ बुझतीं जातीं हैं देख जलानेवाले ।
अब रसमय संसार बना है भरे नदी नद नाले ॥
फोड़ता क्यों रोकर तारे ।
समझजा स्वार्थी मतवारे ॥ ५ ॥

मिहर्बाँ

(१)

मिहर्बां हो जायँगे, दर्दे जिगर होने तो दो ।
संगदिल गल जायँगे, कुछ रुख इधर होने तो दो ॥

(२)

दिल गलाकर जो बनाऊँ, आँसुओंकी धार मैं ।
दिलमें चमकेंगे मगर यह दिल ज़रा धोने तो दो ॥

(३)

पुतलियोंमें ही पकड़ कर क़ैद कर दूँगा उन्हें ।
पर पुतलियों को ज़रा बेचैन बन रोने तो दो ॥

(४)

वे उठायेंगे मुझे, छाती लगायेंगे मुझे ।
ख्वाब उनका देखने को कुछ मुझे सोने तो दो ॥

(५)

नेक बनकर जब मुहब्बत ज़र्रे ज़र्रे से करूँ ।
वे मुहब्बत में फँसेंगे पर बदी खोने तो दो ॥

(६)

आयेंगे कर जायेंगे वे दिलको मोअत्तर चमन ।
पर दिलोंपर प्रेम के कुछ बीज भी बोने तो दो ॥
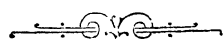
युवक

ओ युवक वीर ओ युवक वीर ।
किस लिये आज तू है अधीर ॥
ओ युवक वीर ओ युवक वीर ।
पथ है न अगर तो पथ निकाल ।
हों गिरि अटवी या भीष्म व्याल ॥
बढ़ता चल चलकर पवन चाल ।
बढ़ तू बाधाएँ चीर चीर ।
ओ युवक वीर ओ युवक वीर ॥ १ ॥
बढ़ वीर प्रलोभन--जाल तोड़ ।
विपदाओं की चट्टान फोड़ ॥
कायरता की गर्दन मरोड़ ।
हरले दुनिया की दुःख पीर ।
ओ युवक वीर, ओ युवक वीर ॥ २ ॥
रख साहस क्यों बनता अनाथ ।
यौवन से है जब तू सनाथ ॥
भगवान सत्य दे रहा साथ ।
उड़ता चल बनकर खर समीर ।
ओ युवक वीर ओ युवक वीर ॥ ३ ॥
कर जाति पाँति जंजाल दूर ।
सारे घमंड कर चूर चूर ॥
सर्वस्व त्याग बन प्रेम-पूर ।
दुनिया की खातिर बन फ़कीर ।
ओ युवक वीर ओ युवक वीर ॥ ४ ॥

सम्मेलन

हुआ बिछुड़ों का सम्मेलन,
भाई भाई दूर हुए थे टूट चुके थे मन ।
हुआ बिछुड़ों का सम्मेलन ॥ १ ॥

एक जाति पर भेद बनाये ।
एक धर्म नाना कहलाये ॥
एक पंथके विविध पन्थकर भटके हम वन वन ॥
हुआ बिछुड़ों का सम्मेलन ॥ २ ॥

सत्य अहिंसा ध्येय हमारा ।
विश्वप्रेम ही गेय हमारा ।
भूले ध्येय गेय लड़ बैठे कैसा भोलापन ॥
हुआ बिछुड़ों का सम्मेलन ॥ ३ ॥

राम कृष्ण जिनवीर मुहम्मद ।
बुद्ध यीशु जरथुस्त प्रेमनद ।
न्यारे न्यारे वेष किन्तु हितमय सबका जीवन ॥
हुआ बिछुड़ों का सम्मेलन ॥ ४ ॥

आज हृदय से हृदय मिला है ।
मुरझाया मन सुमन खिला है ।
समुदित सत्यसमाज आज भर देगा नवचेतन ॥
धन्य यह सच्चा सम्मेलन ॥ ५ ॥
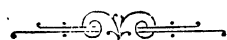
मेरी भूल

हुई थी कैसी मेरी भूल ।
तेरी महिमा भूल व्यर्थ ही डाली तुझ पर धूल ।
हुई थी कैसी मेरी भूल ॥

[१]

थोड़ी सी यह मति गति पाकर ।
सद्विवेक का भान भुलाकर ।
मान-यान में बैठ उड़ेंगें लीं मन ही मन फूल ।
हुई थी कैसी मेरी भूल ॥

[२]

थोड़ासा धनका लव पाकर ।
अपने को उन्मत्त बना कर ।
मानवता पर तिरस्कार बरसा कर बोये शूल ।
हुई थी कैसी मेरी भूल ॥

[३]

थोड़ासा अधिकार मिला जब ।
गर्ज उठा निर्दय होकर तब ।
पाया जग से कोटि कोटि धिक्कार बना प्रतिकूल ।
हुई थी कैसी मेरी भूल ॥

[४]

थोड़ासा यदि नाम कमाया ।
पाई यश की झूठी छाया ।
छाया की माया में भूला, उड़ा, उड़े ज्यों तूल ।
हुई थी कैसी मेरी भूल ॥

[५]

महाकालने चक्र घुमाया ।
तब ऊपर से नीचे आया ।
नंदन वन की जगह खड़े देखे चहुँ ओर बबूल ।
हुई थी कैसी मेरी भूल ॥

[६]

तेरी याद हुई मुझको तब ।
काल लूट ले गया मुझे जब ।
की जड़ चेतन जगने मेरे दुख में टालमटूल ।
हुई थी कैसी मेरी भूल ।

[७]

तब तेरी चरण-स्मृति आई ।
मैंने अश्रुधार बरसाई ।
आंखों का मल बहा दिखा सच्चे जीवन का मूल ।
हुई थी कैसी मेरी भूल ॥

[८]

दूर हुआ तेरा विछोह तब ।
मद उतरा हट गया मोह तब ।
विश्वप्रेमके रंग रँगा मैं पाकर तेरी धूल ।
तभी सुधरी वह मेरी भूल ।

तू

मिला तू जीवन का आधार ।
दुनिया के धक्के खा खाकर आया तेरे द्वार ॥ मिला. ॥
परम निरीश्वर का ईश्वर तू वीतराग का राग ।
बुद्धि भावना का संगम तू तू है अजड़ प्रयाग ॥
विश्वके सब तीर्थों का सार ।
मिला तू जीवन का आधार ॥१॥
मुझ निर्बल का बल है तू ही मुझ मूरख का ज्ञान ।
मुझ निर्धन का धन है तू ही तू मेरा भगवान ॥
भक्ति है तू ही तू ही प्यार ।
मिला तू जीवन का आधार ॥२॥
निर्मल बुद्धि बताई तूने निर्मल व्योम समान ।
मात अहिंसा की सेवा में खींचा मेरा ध्यान ॥
बजाये मेरे टूटे तार ।
मिला तू जीवन का आधार ॥३॥
तेरे चरण पालिये मैंने अब किसकी पर्वाह ।
विपत्प्रलोभन कर न सकेंगे अब मुझको गुमराह ॥
चलूंगा तेरे चरण निहार ।
मिला तू जीवन का आधार ॥४॥
निर्बल निर्धन निःसहाय हूं बुद्धिहीन गुणहीन ।
सभी तरह से बना हुआ हूं मैं दीनों का दीन ॥
किन्तु है तेरी भक्ति अपार ।
करेगी जो मेरा उद्धार ॥५॥

तेरा नाम धाम

गिनाऊँ क्या क्या तेरे नाम ।
कहूं क्या कहां कहां है धाम ॥
नित्य निरंजन निराकार तू प्रभु ईश्वर अल्लाह ।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तू ही, परम प्रेम की राह ॥
खुदा है तू ही तू ही राम ।
गिनाऊँ क्या क्या तेरे नाम ॥१॥
महादेव शिव शंकर जिन तू रब रहीम रहमान ।
गोड यहोवा परम पिता तू अहुरमज्द भगवान ॥
सिद्ध अरहंत बुद्ध निष्काम ।
गिनाऊँ क्या क्या तेरे नाम ॥२॥
सेतुबंध जेरुसलम काशी मक्का या गिरनार ।
सारनाथ सम्मेदशिखर में बहती तेरी धार ॥
सिन्धु गिरि नगर नदी वन ग्राम ।
कहूं क्या कहां कहां है धाम ॥३॥
मन्दिर मसजिद चर्च, गुरु-द्वारा स्थानक सब एक ।
सब धर्मालय सब में तू है होकर एक अनेक ॥
सभी को वन्दन नमन सलाम ।
कहूँ क्या कहां कहां है धाम ॥४॥
मन्दिर में पूजा को बैठा मसजिद पढ़ी नमाज ।
गिरजा की प्रेयर में देखा मैंने तेरा साज ।
एक हो गये सलाम प्रणाम ।
गिनाऊं क्या क्या तेरे नाम ॥५॥

तेरा रूप

तेरा रूप न जाना मैंने ।

निराकार बनकर तू आया मगर नहीं पहिचाना मैंने । तेरा ॥१॥

मन मन में था तन तन में था ।

कण कण में था क्षण क्षण में था ॥

पर मैं तुझको देख न पाया, पाया नहीं ठिकाना मैंने । तेरा ॥२॥

रवि शशि भूतल अनल अनिल जल ।

देख चुका तेरा मूरति--दल ।

मूरति देखी किन्तु न देखा, तेरा वहां समाना मैंने । तेरा ॥३॥

उरग नभश्चर जलचर थलचर ।

तेरी मूर्ति बने सब घर घर ।

उन सबने संगीत सुनाया, तेरा सुना न गाना मैंने । तेरा ॥४॥

पर जब तू मानव बन आया ।

तब तेरे दर्शन कर पाया ॥

तब ही परम पिता सब देखा, तेरा पूजन ठाना मैंने । तेरा ॥५॥

करुणा प्रेम ज्ञान बल संयम ।

वत्सलता दृढ़ता विवेक शम ॥

देखे तेरे कितने ही गुण, तब तुझको पहिचाना मैंने । तेरा ॥६॥

तुझको परम पिता सम पाया ।

देखी सिर पर तेरी छाया ॥

तब ही पुलकित होकर ठाना, जीवन सफल बनाना मैंने ॥

तेरा रूप न जाना मैंने ॥७॥

भगवति

कल्याणकारिणि दुखनिवारिणि प्रेमरूपिणि प्राणदे ।
वात्सल्यमयि सुखदे क्षमे जगदम्ब करुणे त्राणदे ॥
भगवति अहिंसे आ यहाँ भूले जगत पर कर दया ।
वीरत्व में भी प्यार भरकर विश्वको करदे नया ॥१॥

सारे नियम यम अंग तेरे वस्त्र तेरे धर्म हैं ।
ये वस्त्र के सब रंग दैशिक और कालिक कर्म हैं ॥
गुणगण सकल भूषण बने चैतन्यमयि हे भगवती ।
हे शक्तिप्रेममयी अभयदे अमर ज्योति महासती ॥२॥

इंजील हो या हो पिटक या सूत्र वेद पुरान हो ।
हो ग्रंथ आवस्ता व्यवस्था-शास्त्र या कि कुरान हो ॥
सब हैं सरस संगीत तेरे दूर करते हैं व्यथा ।
सब धर्मशास्त्रों में भरी है एक तेरी ही कथा ॥३॥

वे हों मुहम्मद यीशु हों या बुद्ध हों या वीर हों ।
जरथुस्त हों कन्फ्यूसियस हों कृष्ण हों रघुवीर हों ॥
अगणित दुलारे पुत्र तेरे विश्व के सेवक सभी ।
तेरे पुजारी वे सभी समता न जो छोड़ें कभी ॥४॥

मातेश्वरी ऐश्वर्य अपना विश्व में विस्तार दे ।
हो प्रेम-परिपूरित जगत ऐसा जगत को प्यार दे ॥
धुल जाय सारा वैर जिसमें वह सुधा की धार दे ।
सत्प्रेम का शृङ्गार दे यह वरद पाणि पसार दे ॥५॥

जगदम्ब

जगदम्ब जगत है निरालम्ब अवलम्बन देने को आजा ।
हिंसा से जगत तबाह हुआ जगकी सुध लेने को आजा ॥
रहने दे निर्गुण रूप प्रेम की मूरति माँ बनकर आजा ।
रोते बच्चे खिलखिला उठें ऐसा प्रसन्न मन कर आजा ॥१॥

भर रहा जगत में द्वेषदम्भ सब जगह क्रूरता छाई है ।
छल छद्मोंने मन भ्रष्ट किये इसलिये गंदगी आई है ॥
हैं तड़प रहे तेरे बच्चे दुःखों से पिंड छुड़ा दे तू ।
भनभना रहीं हैं विपदाएँ अञ्चल से तनिक उड़ादे तू ॥२॥

बरसादे मन पर प्रेम सुधा नन्दन सा उपवन बन जावे ।
सब रंग बिरंगे फूल खिलें स्वर्गीय दृश्य भूपर आवे ॥
सब रंगों का आकृतियों का जगमें परिपूर्ण समन्वय हो ।
हैवान भगे शैतान भगे सबका मन मानवतामय हो ॥३॥

तेरी गोदी का सिंहासन मिल जावे सबको मनभाया ।
सन्तप्त जगत पर छाजाये तेरे ही अञ्चल की छाया ।
वात्सल्यमयी मूरति तेरी दुनिया की आशा हो बल हो ।
सारा धन वैभव चञ्चल हो पर तेरी मूर्त्ति अचंचल हो ॥ ४ ॥

तेरा अनहद संगीत उठे ब्रह्मांड चराचर छाजावे ।
उस तान तान पर सारा जग सर्वस्व छोड़ नचता आवे ।
धन वैभव बल अधिकार कला तेरा अपमान न कर पावे ।
श्री शक्ति शारदाओं का दल रागों में राग मिलाजावे ॥५॥

जय सत्य अहिंसे

जय सत्य अहिंसे जगत्पिता जगमाता।
कल्याणधाम अभिराम सकलसुखदाता ॥

तुम चिदाकार निर्मूर्त्ति अनवतारी हो।
पर भक्त-हृदय में गुणमय नर-नारी हो।
तुम जननी-जनक-समान प्रेम-धारी हो॥
भगवान-भगवती हो अघ-तमहारी हो॥
तुममें वात्सल्य विवेक मूर्त्त बनजाता।
जय सत्य अहिंसे जगत्पिता जगमाता॥१॥

निर्मल मति का सन्देश सुनाया तुमने।
संयम सुख का साम्राज्य दिखाया तुमने॥
वीरत्वपूर्ण समता को गाया तुमने।
भाई भाई में प्रेम सिखाया तुमने॥
है वरद पाणि भक्तों को अभय बनाता।
जय सत्य अहिंसे जगत्पिता जगमाता॥ २॥

तुम हो अवर्ण पर नाना वर्ण तुम्हारे।
तुम रजतचन्द्रिका-सम जगके उजयारे॥
हैं दिव्य ज्ञानकी ज्योति नयन रतारे।
तपनीय वर्ण गुणमय भूषण हैं प्यारे॥
है अंग अंग वैभव अनंत सरसाता।
जय सत्य अहिंसे जगत्पिता जगमाता॥ ३॥

है देश काल का तुमने मर्म बताया ।
हैं पट के नाना रंग ढंग ऋतु-छाया ॥
इस विविध-रूपता में एकत्व दिखाया ।
सब धर्मोंमें भर रही तुम्हारी माया ॥
तुम सब धर्मों के मूल, जगत के त्राता ।
जय सत्य अहिंसे जगत्पिता जगमाता ॥ ४ ॥
जितने तीर्थंकर धर्म सिखाने आये ।
जितने पैगम्बर ईश्वर-दूत कहाये ॥
जितने अवतारों ने सुकर्म बतलाये ।
उन सबने गुणगण सदा तुम्हारे गाये ॥
तुम मातपिता, वे हैं सुपुत्र, सब भ्राता ।
जय सत्य अहिंसे जगत्पिता जगमाता ॥ ५ ॥
सारे संयम सज्ज्ञान, स्वरूप तुम्हारे ।
अम्बर के तन्तु समान नियम यम सारे ॥
सब सम्प्रदाय, पटके एकेक किनारे ।
तुम नभसमान, गुणगण हैं रविशशि तारे ॥
तुम हो अनंत कोई न अंत है पाता ।
जय सत्य अहिंसे जगत्पिता जगमाता ॥ ६ ॥
बच्चों पर अपनी दयादृष्टि फैलाओ ।
दो घट घट के पट खोल प्रकाश दिखाओ ॥
अन्तस्तल का मल दूर कराओ आओ ।
भूली दुनिया पर वरद पाणि फैलाओ ॥
हो विश्वप्रेम, सदसद्विवेक, सुखसाता ।
जय सत्य अहिंसे जगत्पिता जगमाता ॥ ७ ॥